चन्दामामा
फ़रवरी १९९०

फेंका-फेंकी का मज़ेदार नया खेल ...
फ़्रिस्बी
मुफ़्त
फ़्रिस्बी! चॉकलेट
कॉम्प्लान के प्रत्येक
५०० ग्राम के पैक के साथ
Complan
कॉम्प्लान®
परिपूर्ण नियोजित आहार
लाल, पीली, हरी,
नीली, अनेक रंगों
में मिलती फ़्रिस्बी.
फेंको-उड़ाओ, मौज
करो. कॉम्प्लान
फ़्लाइंग फ़्रिस्बी.
अब चुने हुए स्थानों में उपलब्ध.
GL/13C/172 HIN

चन्दामामा की योजना "डाक से खिलौना"

सिर्फ चन्दामामा के पाठकों के लिए विशेष प्रस्तुति।

A. बॉबिट:
आकार: १२.५ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ८३.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. ४.८० मिलाइए।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ८.३० मिलाइए।

B. टेडी:
आकार: १०.५ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ९३.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. ५.३५ मिलाइए।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ९.३० मिलाइए।

C. कब्बो:
आकार: ७ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ६८.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. ३.९० मिलाइए।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ६.८० मिलाइए।

D. बाउ वाउ:
आकार: ६ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. ४३.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. २.६० मिलाइए।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. ४.३० मिलाइए।

E. बच्चा खरगोश:
आकार: ६ इंच (ऊँचाई)
क़ीमत: रु. २३.००
तमिलनाडु में प्राप्त ऑर्डर पर जनरल सेल्स टैक्स रु. १.४५ मिलाइए।
तमिलनाडु के बाहर से प्राप्त ऑर्डर पर सेन्ट्रल सेल्स टैक्स रु. २.३० मिलाइए।

(खरगोश का यह सुखी परिवार पूरा करने के लिए मम्मी-खरगोश और डैडी-खरगोश के बारे में अगले अंक में पढ़िए।)

आप हमारे लिए विशेष प्रिय हैं, इस लिए यह ख़ास योजना केवल आपके लिए । ये बढ़िया खिलौने सब से पहले आपके पास पहुँच रहे हैं । और जैसा कि आप जान पाए होंगे, इनका दाम बहुत कम! इसके अलावा एक और तरह से आप बचत कर सकते हैं । 'चन्दामामा' के वार्षिक चन्दे में अपने आप आपको सहूलियत मिलेगी । १२ प्रतियों के लिए ५ और २४ प्रतियों के लिए १५ रु. की छूट!

प्रिय चन्दामामा

मैंने आपकी योजना "डाक से खिलौना" पढ़ी । और इन बढ़िया खिलौनों की ओर आँखें भर कर देखा ।
मुझे ये खिलौने भेजिए । (एक या अनेकों पर टिक लगाइए ।)

* बॉबिट * टेड़ी * जम्बो * बाउ-बाउ * पपा-खरगोश

मुझे मालूम हुआ कि 'चन्दामामा' के चन्दे में भी मुझे सहूलियत मिलेगी । नीचे लिखे अनुसार चन्दामामा का चंदा भेज रहा हूँ ।

* एक वर्ष (३६ रुपयों के ऐवज ३० रु.)
* दो वर्ष (७२ रुपयों के ऐवज ५७ रु.)
* माफ कीजिए । अभी मुझे 'चंदामामा' नहीं चाहिए ।

चन्दामामा की योजना "डाक से खिलौना"

Note : This offer is valid only up to 30-6-1990.

इसके साथ चंदामामा टॉयट्रॉनिक्स प्रा.लि. के नाम रु. .... की पोस्टल ऑर्डर/मनी-ऑर्डर भेज रहा हूँ। आशा है, एक महीने के अंदर खिलौना/खिलौने मुझे प्राप्त होंगे। अगर खिलौने मुझे पसंद नहीं आए, तो मानता हूँ, प्राप्ति के बाद एक हफ़्ते भर में मैं उन्हें वापस भेजूँ, तो मेरी भेजी रक़म मुझे निश्चय वापस भेजी जाएगी।

मेरा नाम: .... जन्म-तिथि: ....

डाक का पता: ....

मेरी विशेष अभिरुचि: ....

मासिक पत्रिकाएँ/व्यंग-चित्र: ....

दूरदर्शन कार्यक्रम: .... खिलौने: ....

मनोरंजन के साधन: वाचन/खिलौने/खेल/दूरदर्शन/विडिओ/विडिओ गेम्स/अन्य ....

चन्दामामा की योजना "डाक से" खिलौना

आपको सिर्फ इतना ही करना है। साथवाला कुपन भर कर उसे निम्न पते पर डाक से रवाना करें—चंदामामा टॉयट्रॉनिक्स प्रा.लि., चंदामामा बिल्डिंग्ज, १८८, एन्.एस्.के. सालै, वडपलणी, मद्रास ६०० ०२६। आपका कुपन प्राप्त होने पर एक महीने भर में आपका पसंदीदा खिलौना आपके हाथ आएगा। यह/ये खिलौना/खिलौने आपको पसंद न आएँ, तो एक हफ़्ते भर में उन्हें डाक से वापस भेज दें। आपकी भेजी रक़म आपको निश्चय वापस मिल जाएगी।

सूचना

कुपन में उल्लेखित खिलौनों में से जो एक या अनेक आपको चाहिए, उन पर टिक लगाइए। साथ साथ अपना पूरा पता लिखिए और बताइए कि धन-राशी आप किस प्रकार भेज रहे हैं; जैसे कि पोस्टल-ऑर्डर या मनी-ऑर्डर। देखिए कि आप ठीक क़ीमत की रकम अदा कर रहे हैं। यह इस लिए कि आपकी इच्छानुसार खिलौना/खिलौने भेजने में हमें कोई कठिनाई न हो। जो कुपन पहले ही भेज चुके हैं और जिन्होंने सारी आवश्यक जानकारी ठीक न लिखी हो, वे हमें पुनः अलग रूप से लिखें, ताकि खिलौना/खिलौने यथासंभव शीघ्र भेज दिए जा सकें।

Manufactured in technical collaboration with
Sammo Corporation, South Korea.

चन्दामामा टॉयट्रॉनिक्स प्राइवेट लिमिटेड़
चन्दामामा बिल्डिंग्ज
१८८, एन्. एस्.के. सालै, वड़पलणी, मद्रास-६०० ०२६.

Mudra:M:CT:3789

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'   संचालक : नागिरेड्डी

शुभकामनाएं तथा निवेदन !

प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन का होना स्वाभाविक है ! सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में परिवर्तन ला सकनेवाली प्रत्येक घटना महत्वपूर्ण होती है । समस्त जनता प्रगति एवं विकास की कामना करती है । जनता की इस आकांक्षा की पूर्ति के लिए नेता यदि ईमानदारी से प्रयत्न करें तो यह परिवर्तन प्रगति एवं विकास का कारणभूत बन सकता है ।

हमारे देश में श्री वी. पी. सिंह के नेतृत्व में नये मंत्री मण्डल का गठन हुआ है । नये प्रधान मंत्री को भारत की समस्त जनता के साथ हम भी हमारी शुभकामनाएँ देते हैं । यह बात सर्व विदित है कि आज के बालक ही भावी भारत के निर्माता हैं । भावी नागरिकों के कल्याण तथा मानसिक विकास के लिए क्या हमारे बुज़ुर्ग अपने दायित्व का ईमानदारी के साथ पालन करेंगे? इधर कुछ वर्षों से पत्रिका प्रकाशन के क्षेत्र में समस्त प्रकार की चीजों के मूल्य बढ़ गये हैं । खासकर कागज़ का दाम हद से ज्यादा बढ़ गया है । इस कारण हमें अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । ऐसी स्थिति में हम बच्चों के प्रति अपने दायित्व का पालन कैसे कर पायेंगे? क्या बच्चों की शिक्षा और उनके मनोरंजन के लिए पठन सामग्री देने के लिए अभिभावकों पर और अधिक बोझ डालना न्यायसंगत होगा? इन कठिन समस्याओं पर विचार करके तत्काल उनके ह[illegible] के उपाय सुझाने के लिए हम विनयपूर्वक शासकों से निवेदन करते हैं । क्योंकि हमारा विश्वास है कि जैसे बच्चों के लिए पौष्टिक भोजन देना आवश्यक है, वैसे ही उनमें पढ़ने की रुचि को बढ़ावा देना भी अत्यावश्यक है !

वर्ष : ४२   फरवरी १९९०   अंक : ६

एक प्रति : ३-००   ::   वार्षिक चन्दा : ३६-००

प्रिट ग्लू स्टिक

कागज चिपकाने का सबसे आसान व स्वच्छ उपाय

आसान. साफसुथरा. शीघ्र.

- अपनी किताबों को कवर डालो.
- लेबल लगाओ.
- चित्र और खिलौने बनाओ.
- पतंग सौंधो.
- फोटो और स्टॅम्प चिपकाओ.
- उपहार बाँधो.
- और भी बहुत कुछ.

आज ही अपनी मम्मी से
स्टेशनरी की दुकान या जनरल स्टोर्स से
प्रिट ग्लू स्टिक लाने को कहना.

कोरस प्रिट ग्लू स्टिक – अच्छा-खासा साफसुथरा आनन्द !

कोरस® वितरक : कोरस (इंडिया) लि., बम्बई 400 018.
उत्पादक : कॅमफसन केमिकल प्रॉडक्टस प्रा.लि., बम्बई 400 007.
Henkel प्रिट ® हेन्केल, पश्चिम जर्मनी का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है.

AKA/423-A/HN
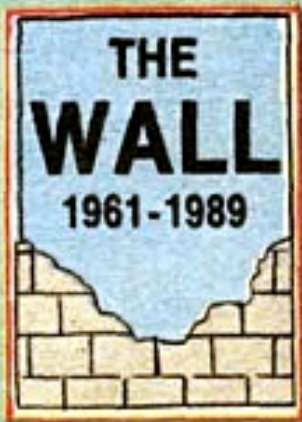
विभाजन करनेवाली दीवार का पतन

चीन की ऊँची दीवार तो सब को मालूम है । शत्रु के आक्रमण से चीन की सीमाओं की रक्षा करने के उद्देश्य से बरसों पहले इस ऊँची दीवार का निर्माण हुआ था । यह संसार के सात महान् आश्चर्यों में से एक के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी है ।

हाल ही में सन १९६१ में एक और ऊँची दीवार का निर्माण हुआ । लेकिन इस दीवार के बनाने के उद्देश्य चीन की दीवार के उद्देश्य से सर्वथा भिन्न है । अपने देश की जनता को पड़ोस के देश में भागने से रोकने के लिए शासकों ने यह दीवार बनाई ।

यह क्यों हुआ इसका कारण जानने के लिए हमें दूसरे विश्व-महायुद्ध के इतिहास के पृष्ठ पलटने पड़ेंगे । जर्मनी के नेता हिटलर ने विश्व पर प्रभुत्व स्थापित करने का संकल्प किया था । पर अपने इस प्रयत्न में सन १९४५ में वह पराजित हुआ । उस समय जर्मनी की राजधानी बर्लिन को दो प्रमुख भागों में विभाजित किया गया । बर्लिन का पश्चिमी भाग ब्रिटन, अमेरिका और फ्रान्स के कब्ज़े में आ गया और पूर्वी भाग सोवियत रूस के अधीन हो गया । हिटलर तथा उसके साथियों को पराभूत करने में इन चार देशों ने प्रमुख हिस्सा लिया था ।

सन १९४४ में दोनों बर्लिन राज्य स्ततंत्र देश बन गये । पूर्वी बर्लिन को 'जर्मन डेमोक्रॅटिक रिपब्लिक' और पश्चिमी बर्लिन को 'जर्मन फेडरल रिपब्लिक' नाम से संबोधित किया जाने लगा । दोनों देशों ने दो भिन्न राजनैतिक सिद्धान्तों को स्वीकार किया । नाम में 'प्रजातंत्र' (डेमोक्रॅटिक) शब्द होने पर भी पूर्व जर्मनी साम्यवादी देश बना और पश्चिम जर्मनी प्रजातंत्र के पथ पर आगे बढ़ा । अनेक कारणों से पश्चिम जर्मनी पूर्वी जर्मनी की अपेक्षा विविध क्षेत्रों में विशेष विकास कर सका । इन सब से बढ़कर दोनों में एक प्रमुख भेद रहा—पश्चिम जर्मनी के नागरिक अपने विचार स्वेच्छा के साथ व्यक्त कर सकते थे, जब कि पूर्व जर्मनी के नागरिकों को ऐसी स्वतंत्रता न थी ।

क्रमशः पूर्वी बर्लिन के कुछ लोग पश्चिम बर्लिन में यात्री बन कर आने

लगे । कुछ लोग अपने रिश्तेदार तथा मित्रों से मिलने के लिए अक्सर आया करते । पर पूर्वी जर्मनी की सरकार ने इस पर प्रतिबंध लगाया ।

आवागमन को रोकने के लिए सीमा पर ऊँची दीवार बनवाई । अगर कोई दीवार लाँघ कर भागने की कोशिश करते तो उनको पूर्वी जर्मनी के पोलिस गोलियों का शिकार बनाते । इस कारण आम जनता के मन में इस दीवार के प्रति कुछ घृणा का भाव पैदा हुआ, और सब ने अपना असंतोष प्रकट किया । इसके साथ ही पूर्वी जर्मनी की जनता में स्वतंत्रता की इच्छा प्रबल होती गई । क्रमशः जनता में यही इच्छा बलवती हो उठी कि हमेशा के लिए एक ही पार्टी के शासन में रहने के बदले अपनी वांछित पार्टी को चुनने अधिकार प्राप्त हो जाए ।

आखिर हाल में पूर्वी जर्मनी की सरकार ने दोनों बर्लिनों को विभाजित करनेवाली दीवार के द्वारों को खोल देने का निश्चय किया । इसे देख हज़ारों नागरिक आनंद व उत्साह से नाचने लगे । पश्चिम बर्लिन के नागरिकों में से कुछ लोगों ने विभाजन करनेवाली इस दीवार के कुछ हिस्सों को तोड़ डाला ।

बर्लिन की दीवार के पतन को मानव के भीतर की स्वेच्छा की प्रवृत्ति के संकेत के रूप में समझा जा सकता है ।
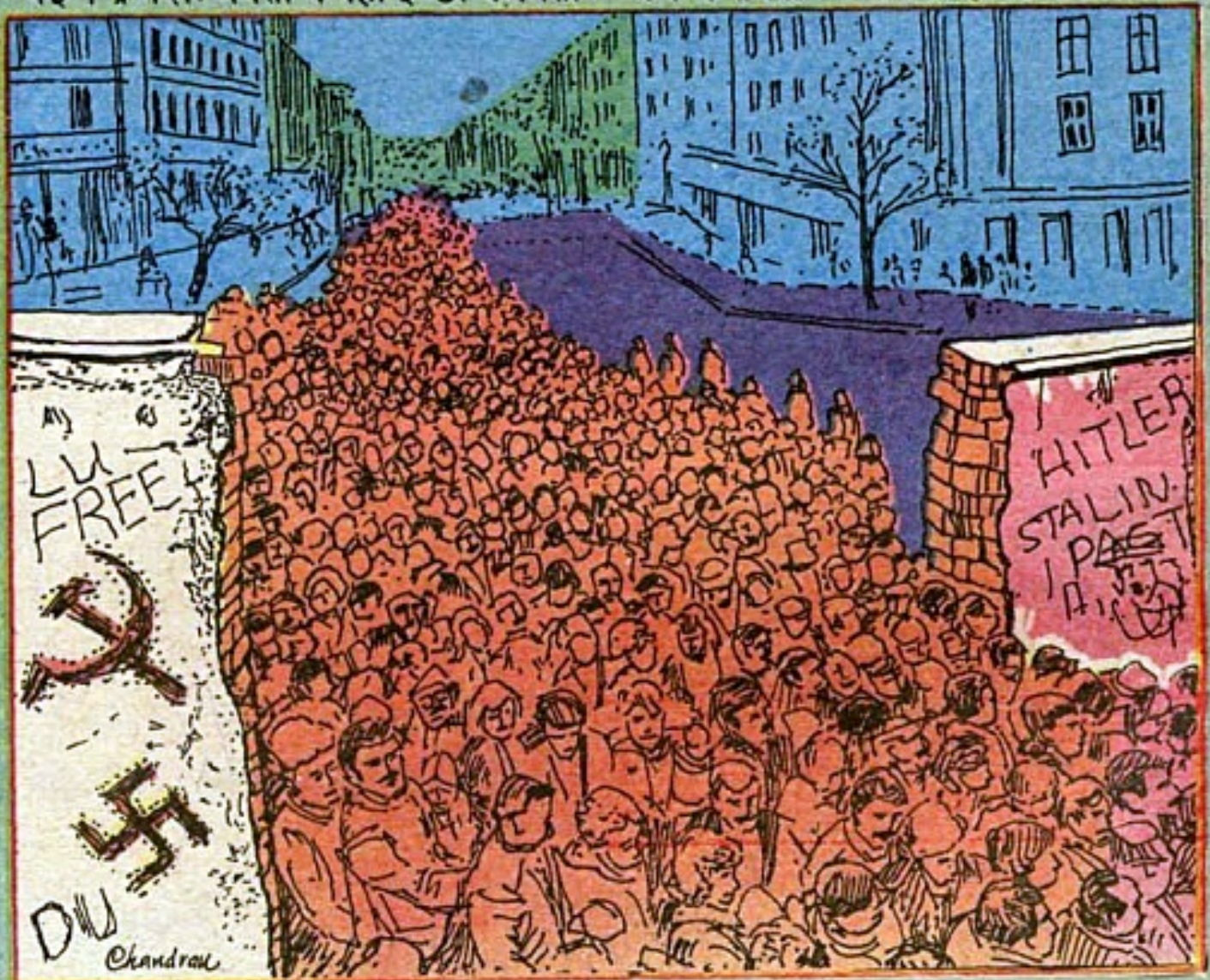
गौरीपुर के पास में एक झरना था। उसके किनारे लक्ष्मण नाम के एक मछुए ने अपनी झोंपड़ी बनायी थी और उसमें वह अपनी पत्नी व बच्चों के साथ रहा करता था। सामने झरने का पानी कुछ गहरा था और पानी में बहाव भी तेज़ न था। इस कारण लक्ष्मण के जाल में बहुतेरी मछलियाँ फँस जातीं थीं। मछुआ इन मछलियों को पासवाले शहर में जाकर बेच देता, और उससे जो आमदनी होती, उसमें अपनी गृहस्थी का खर्च चलाता।

एक दिन दो सिपाही मछुए के पास आये और उन्होंने कहा—"सुनो भाई, महाराज चन्द्रसेन जनता के सुख-दुख को समझने के लिए देश भर में भ्रमण करते हैं। शीघ्र ही वे यहाँ पधारनेवाले हैं। उनका पड़ाव डालने के लिए यह प्रदेश अधिक अनुकूल होगा, इस लिए तुम यह स्थान खाली करके किसी दूसरी जगह चले जाना।"

बेचारे लक्ष्मण ने अपना निवास छोड़ दिया और थोड़ी दूर पर अपना नया स्थान बनाया। वहाँ झरने की गहराई कम थी और पानी कुछ तेज़ बहता था। इस कारण उसके जाल में कम मछलियाँ फँसने लगीं। जो कुछ मछलियाँ हाथ लगतीं, उन्हें बेच कर जो थोड़े पैसे मिलते, उतने से परिवार को चलाना उसे मुश्किल हो गया।

कई महीने बीत गये, पर लक्ष्मण ने जिस स्थान को खाली किया था, वहाँ महाराजा का पड़ाव कभी पड़ा ही नहीं। इस लिए उसके मन में अपने पुराने निवास-स्थान पर जाने की इच्छा दिन-ब-दिन बढ़ती गयी। एक दिन उसने सोचा कि सिपाहियों के पास जाकर अपना दुखड़ा रोये तो कुछ रास्ता निकल आएगा। कम-से-कम यह तो मालूम होगा कि महाराज कब आ रहे हैं?

मंजुश्री दास

झरने के पास पड़ाव डाले सिपाहियों से एक दिन मछुआ मिला और उसने अपनी सारी मुसीबतें बताते हुए उनसे पूछा—"कितना अच्छा हो कि महाराज एक बार शीघ्र ही आकर चले जाएँ! यह बताइए कि वे आखिर कब आनेवाले हैं?"

कुछ गुस्सा करते हुए सिपाहियों ने कहा—"महाराजा यहाँ कब आनेवाले हैं, यह तो केवल राजा तथा महारानी ही जानते हैं। राजा साहब यहाँ पड़ाव डाल कर जब चले जाएँगे, तब तुम फिर यहाँ अपना निवास-स्थान बना सकते हो। तब तक तुम भूल कर भी इस तरफ मत आओ। जहाँ हो वहीं अच्छे हो! थोडी और दूरी पर जाकर देखो। मछलियाँ तो सभी जगह भरी पड़ी समझ में नहीं आता। चले जाओ।"

और एक हफ़्ता बीत गया। लक्ष्मण को अपनी गृहस्थी चलाना और भी मुश्किल होने लगा। अब अपनी मुसीबतों को वह बर्दाश्त हैं। इसी जगह से तुम्हें क्यों इतनी मुहब्बत है न कर पाया। उसने निश्चय किया कि सीधे महाराजा के पास जाकर बात करे। महाराज प्रजा पर अन्याय करना तो नहीं चाहते होंगे। और वह राजधानी नगर पहुँच गया।

लेकिन वहाँ पर राजमहल के पहरेदारों ने मछुए को रोका और कहने लगे—"राजा के दर्शन करना कोई मामूली बात तो है नहीं। अगर तुम चाहते हो तो द्वार की एक तरफ खड़े रहो। एकाध घंटे बाद महामंत्रीजी इस तरफ आएँगे। तुम्हें जो कुछ शिकायत करनी है, उनके पास निवेदन कर सकते हो।"

मछुए ने साफ कह दिया—"महामंत्री से तो मेरा कोई काम नहीं है। मुझे तो महाराजा के ही दर्शन करने हैं।"

सिपाहियों ने सोचा कि यह कोई भोला गँवार है। उन्होंने कहा—"सुनो, अभी महाराजा महल में नहीं है। ऐसा करो—कल आ जाना।"

"तब तो महाराज हमारे गाँव के झरने के किनारे पड़ाव डालने के लिए ही गये होंगे!" मछुए ने मारे खुशी के कहा।

सिपाहियों ने उसे डाँटते हुए कहा—"कोई गाँव नहीं, और कोई झरना नहीं। चलो, तुम यहाँ से भाग जाओ। पागल कहीं का!"

राजमहल की छत पर से राजा ये सब बातें सुन रहा था। उसने मछुए को बुलाने के लिए

अपने एक अंगरक्षक को भेज दिया । उस समय महारानी भी वहाँ मौजूद थीं ।

मछुए ने महाराजा को विनयपूर्वक प्रणाम किया और उनसे पूछा—"महाराज, आप हमारे गाँव के झरने के किनारे पड़ाव डालने कब पधारनेवाले हैं?"

राजा ने विस्मय के साथ पूछा—"तुम कौन हो? और तुम्हारा गाँव कहाँ है? यह झरना भला कैसा?"

मछुए ने अपना नाम तथा गाँव का ठिकाना बताते हुए सारी कहानी राजा को कह सुनाई । कुछ महीनों पहले सिपाहियों ने आकर किस प्रकार उसके निवास को खाली कराया यह बताते हुए कहा—"महाराज, इस वक्त मैं जहाँ निवास करता हूँ, वह स्थान मछलियाँ पकड़ने के लिए अनुकूल नहीं है । आप कृपया मेरे गाँव पधार कर झरने के किनारे पड़ाव डालिएगा । आपके चले जाने के बाद मैं फिर अपने उसी स्थान पर रहने लगूँगा । वरना मुझे अपने परिवार के साथ भूखों मरना होगा । क्या आप मेरे इस मनोरथ को पूरा नहीं करेंगे?"

मछुए की बातें सुन कर राजा मुस्कुराए और उन्होंने रानी से कहा—"कुछ लोगों का नुक़सान भी होता है ।"

"तब तो आपको मछुए को कुछ हर्ज़ाना देना पड़ेगा?" रानी ने पूछा ।

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है । इस भोले मछुए की सीधे यहाँ आकर मुझ से मिलने की हिम्मत पर मैं बहुत प्रसन्न हुआ । मैं उसे कुछ पुरस्कार देना चाहूँगा अवश्य!" कहते हुए राजा ने कोषाध्यक्ष को बुला भेजा और मछुए को सौ मुद्राएँ दिलाईं ।

अब राजा ने मछुए से कहा—"मैं एक सिपाही को तुम्हारे साथ भेजता हूँ । तुम्हारे गाँव में रहनेवाले दो सिपाही तुम्हें अपनी पुरानी जगह पर रहने से नहीं रोकेंगे । उन्हें मैं वैसा आदेश देता हूँ । तुम जाओ, और अपनी पत्नी व बच्चों के साथ तुम्हारी पहली जगह पर आराम से ज़िंदगी बिताओ ।"

अब मछुआ फूला न समाया । खुशी-खुशी अपने गाँव की ओर चल दिया ।

संन्यासी का शाप

बहुत समय पहले की बात है। कमलपुर गाँव में एक युवक रहा करता था, जिसका नाम था वीरेन्द्र। वह बड़ा बलशाली और सुंदर था, लेकिन था बहुत ग़रीब। वह हर रोज़ जंगल में जाकर लकड़ी काटता और उसे बेचकर अपना पेट पालता।

एक दिन जंगल में एक पेड़ पर चढ़कर वह लकड़ी काट रहा था। संयोग से पेड़ के नीचे से गुज़रनेवाले एक संन्यासी के सिर पर एक लकड़ी गिर पड़ी। संन्यासी को बहुत गुस्सा आ गया और अपने कंठ की रुद्राक्षमाला को ज़मीन पर ज़ोर से पटकते हुए उसने शाप दिया—"अरे दुष्ट! तुम्हारी आँखें फूट गईं हैं क्या? पेड़ के नीचे जानेवाले व्यक्ति की हैसियत का भी तुम्हें ख्याल नहीं! तुम्हारी गिराई डाल ने मुझे घायल कर दिया। तुम इसी क्षण राक्षस बन कर इस जंगल में भटकते रहो।"

बस, उसी क्षण वीरेन्द्र को राक्षस का रूप प्राप्त हो गया। काँपते-थरथराते हुए पेड़ से नीचे उतर आया और संन्यासी के पैरों पर गिर कर प्रार्थना की—"महात्मन्, मैंने अनजान में भूल की। इस लिए आप मुझे इतना कठोर दण्ड दे रहे हैं! दया कीजिए, प्रभु!"

वीरेन्द्र की बातें सुन कर संन्यासी कुछ शान्त हुआ। बोला—"मेरा शाप कभी व्यर्थ नहीं जाएगा। लेकिन इसके प्रभाव से मुक्त होने का एक उपाय मैं तुम्हें बता देता हूँ।"

"महात्मन्, आज्ञा दीजिए।" वीरेन्द्र ने कहा।

संन्यासी ने उपाय बताया—"मैं जानता हूँ, तुम एक निर्धन युवक हो। तुम इसी राक्षस रूप में यहाँ भटकते रहोगे। अगर कोई कन्या अपनी इच्छा से तुम्हारे साथ शादी करेगी, तो तुम अपने पूर्व रूप में मानव बन जाओगे।" फिर संन्यासी अपने रास्ते चला गया।

उर्मिला सरकार

वीरेन्द्र राक्षस के रूप में जंगल में तथा आसपास के पहाड़ी प्रदेशों में भटकता रहा और संन्यासी के बताये मौक़े के आने की प्रतीक्षा करने लगा ।

एक दिन एक ज़मींदार की पुत्री सुगुण सुंदरी पालकी में बैठकर जंगल के मार्ग से अपने ननिहाल जा रही थी । उसके पीछे कुछ सेवक चल रहे थे । एक स्थान पर डाकुओं के एक दल ने आकर उनको रोका । ज़मींदार की पुत्री की रक्षा के लिए साथ चलनेवाले नौकरों ने डाकुओं का सामना किया ज़रूर । पर चूँकि डाकुओं की संख्या अधिक थी, सभी सेवक मार खाकर वहाँ से भाग गये ।

डाकुओं का नेता सुगुण-सुंदरी की रूप-संपदा की ओर आकर्षित हुआ और उसके साथ विवाह करने के इरादे से उसको अपनी पहाड़वाली गुफा में ले गया । वीरेन्द्र आड़ में खड़े खड़े यह सब देख रहा था । उसने डाकुओं के नेता का पीछा किया और गुप्त रूप में गुफा में जाकर छिप गया ।

डाकुओं के सरदार ने सुगुण सुंदरी का परिचय पाया और कहा—"मुझे तुम से प्यार है, मैं तुम से विवाह करना चाहता हूँ । जहाँ तक धन-संपत्ति की बात है, मैं तुम्हारे पिता से किसी प्रकार कम नहीं हूँ । चाहो तो पासवाली गुफ़ा में जाकर देखो । वहाँ पर जितना सोना-चाँदी है, शायद राजा के ख़ज़ाने में भी न होगी ।"

"तुम्हारे पास चाहे जितनी धन-संपत्ति हो, तुम एक डाकू हो । अभी, इसी क्षण तुम बाहर चले जाओ ।" डाँटते हुए सुगुण सुंदरी ने कहा ।

डाकुओं का सरदार बाहर चला गया । उसने सोचा-आज न सही, कुछ दिनों बाद गुण-सुंदरी के मन में परिवर्तन होगा और वह विवाह के लिए तैयार हो जाएगी ।

उसी समय वीरेन्द्र ने प्रवेश किया । मारे भय के काँपनेवाली सुगुण सुंदरी से उसने कहा—"मैं एक राक्षस हूँ यह सोच कर तुम डरो नहीं । सुगुण सुंदरी, मैं तुम्हें इस डाकू के चंगुल से बचा कर कुशलपूर्वक तुम्हारे घर पहुँचा दूँगा । तुम मेरे साथ चलो ।"

ये सब बातें सुनकर सुगुण सुंदरी को आश्चर्य हुआ और उसने प्रश्न किया—"तुम मुझे कैसे जानते हो?"

"मैं केवल तुम को ही नहीं, तुम्हारे पिता को भी जानता हूँ । इस समय वह सब जान कर क्या करोगी? जल्दी निकल पड़ो ।" कहते हुए वीरेन्द्र आगे आगे चलने लगा ।

वे दोनों जंगल में थोड़ी दूर आगे बढ़े थे, कि डाकुओं का सरदार अपने साथियों के साथ वहाँ आ पहुँचा और उनको रोक कर सुगुण सुंदरी से उसने कहा—"यह कंबख्त राक्षस तुम्हारी क्या रक्षा करेगा? यह तो एकदम कायर है! हमने आज तक कभी नहीं देखा कि यह किसी आदमी को मार कर खा रहा है । यह खाता है सिर्फ़ फल, कंद और मूल!" और उसने वीरेन्द्र पर तलवार उठाई ।

वीरेन्द्र ने लपक कर डाकुओं के नेता के हाथ से तलवार छीन ली और उसे उसी की छाती में भोंक दिया । फिर वह उसके साथियों पर टूट पड़ा । जान के डर से वे सब वहाँ से भाग निकले ।

विस्मय के साथ सुगुण सुंदरी ने वीरेन्द्र से कहा—"तुम राक्षस हो, वास्तव में तुम्हें देख कर डाकुओं के सरदार को भाग जाना चाहिए था । क्या बात है भला?"

वीरेन्द्र ने सिर झुका कर दुख के साथ कहा—"हो सकता है शायद उसे मेरा रहस्य ज्ञात हो ।"

सुगुण संदरी ने कहा—"इस प्रकार की दया की भावना तो मैं मानवों में भी कम देखती हूँ । अगर तुम्हें आपत्ति न हो तो मैं तुम्हारे साथ विवाह करना चाहूँगी ।"

बस, दूसरे ही क्षण वीरेन्द्र का राक्षस का रूप जाता रहा । और उसको अपना पूर्व-रूप प्राप्त हुआ ।

सुगुण सुंदरी क्षण दो क्षण चकित रह गई, और फिर उसने कहा-"यह क्या है? तो क्या तुम सचमुच राक्षस नहीं हो?"

वीरेन्द्र ने सुगुण सुंदरी को अपना सारा वृत्त कह सुनाया और फिर वह उसे उसके पिता के घर ले गया । ज़मीनदार ने अपनी पुत्री के मुख से सारा वृत्तान्त जान लिया । उसे बहुत प्रसन्नता हुई, और उसने सुगुण सुंदरी के साथ वीरेन्द्र का विवाह बड़े वैभवपूर्वक संपन्न किया ।

डाकू युवराज

(५)

[सेनापति ने सुमेध राज्यके राजपरिवार का अन्त कर राज्याधिकार पाने के लिये षड्यन्त्र रचा। राजा शान्तिदेव के आदेशानुसार युवराज़ को साथ लेकर रानी सुरंगमार्ग से जंगल के बीच पहुँची। उसने अपने बेटे को स्वामी जयानन्द के हाथ सौंप कर आख़री साँस ली। इधर वीरतापूर्वक युद्ध करके राजा नदी में कूद पड़ा। —आगे पढ़िये।]

राजमहल के भीतर जो लड़ाई छिड़ गयी थी, उससे महल के बाहर इकठ्ठी हुई जनता बिलकुल अनभिज्ञ थी। उस समय कुछ लोग युवराज के जनमदिन के अवसर पर किये गये अतिषबाजी और अन्य मनोविनोद के कार्यक्रमों में मग्न थे। कुछ लोग कुछ अन्य बातें कर रहे थे, तो कुछ दीपालंकरण का दृश्य देखते हुए इधर-उधर टहल रहे थे। सारी राजधानी के नागरिक आनन्दोत्सव में मग्न थे। रात का समय होते हूए भी रास्तों पर लोग झुंड़ के झुंड बनाये जहाँ-तहाँ घूम भटक रहे थे।

इसी में रात का तीसरा पहर बीत गया। चौथे पहर तक एक एक कर सारे कार्यक्रम समाप्त होते गये और मनोविनोद कार्यक्रमों का कोलाहल भी शान्त होने लगा। आतिषबाजी के जले हुए टुकडे इतस्ततः बिखरे दिखाई दे रहे थे। नर्तक, नर्तकियाँ

अपने अपने निवासों को लौटने लगीं। नागरिक अपने घर लौटकर निद्राधीन होने लगे। आनन्द-पर्व समाप्ति पर आया। धीरे धीरे सारे मार्ग निर्मनुष्य हो गए।

राजभवन के अधिकारी ने राजमहल के समस्त कर्मचारियों को एक स्थान पर इकठ्ठा होने का आदेश दिया। उसने एक ऊँची वेदीपर खड़े होकर बोलना आरंभ किया, "सुन लो, राज्य का अधिकार अब राजा शान्तिदेव के हाथ में नहीं है, अब वह अधिकार सेनापति वीरसिंह के हाथों में आ गया है। तुममें से किसी को भी यह जानने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये, कि ऐसा क्यों हुआ है। वह मामला केवल भूतपूर्व राजा शान्तिदेव और वर्तमान राजा से संबंधित है। इसीलिये कोई भी इस संबंध में कभी भी किसी प्रकार की चर्चा नहीं करेगा। वह राजा का आदेश है। अब तुम सब अपने अपने काम में लग जाओ। अगर किसी ने इस आदेश का उल्लंघन किया तो उसे उसके परिण्णामों के लिए तैयार होना चाहिए। मृत्युदंड की सज़ा भी मिल सकती है। इस लिए सावधान!"

सभी कर्मचारी सिर झुकाकर चुपचाप अपने अपने कार्य के लिये चले गये। ढिंढ़ोरा पीटनेवाले भटों की रक्षा के हेतु उनके दोनों तरफ सशस्त्र सैनिक चल रहे थे। उनको डर था कि शान्तिदेव के प्रेमी युवक नागरिक कुछ आंदोलन खड़ा करेंगे। इस लिए बड़ी सावधानी से सब कार्य-कलाप चल रहा था। सैनिक सर्वत्र चेतावनी दे रहे थे कि, "यदि कोई भी व्यक्ति अधिकार परिवर्तन के बारे में प्रश्न करे, तो उसका सिर उड़ा दिया जाएगा।" यह ढिंढ़ोरा सुनकर सारे नागरिकों को अचरज हुआ। एक चौपाल के पास ढिंढ़ोरा सुनकर एक वृद्ध ने अपना दुख प्रकट किया, "कैसा यह अमंगल समाचार सुनना पड़ रहा है वृद्धावस्था में। इस से तो मर जाना ही अच्छा! आखिर यह परिवर्तन क्यों हो रहा है? यह किसी दुष्ट का षड्यंत्र तो नहीं है? कुछ समझ में नहीं आता कि यह सब क्या हो रहा है?"

दूसरे ही क्षण दो सैनिक उसपर टूट पड़े और उसे बन्दी बनाकर ले गये। उसने क्षमा-याचना की और गिड़गिड़ा कर अपने को मुक्त करना चाहा। पर उसका उन सैनिकों

पर कुछ भी परिणाम नहीं हुआ। बड़ी निर्दयता से उसे राजभवन की ओर ले जाया गया।

नगर के मध्यभाग में ढिंढ़ोरा सुनने के लिये असंख्य लोग जमा थे। समाचार सुनने पर उन्हें लगा, मानों उन पर वज्रपात हो गया हो। कोई भी नागरिक कुछ कर न पाया। फिर भी भीड़ में से एक युवक ने आगे बढ़कर पूछा, "क्या हमारे राजा ने ही स्वेच्छा से यह प्रबन्ध किया है? राजा शान्तिदेव क्यों अपने पद से दूर हो रहे हैं? अभी अभी युवराज के जनम-दिन का पर्व हम मना चुके। क्या इसी समय कहीं कोई कुचक्र चल रहा था? हम जानता चाहते हैं कि किस विशेष स्थिति में यह सारा परिवर्तन हो रहा है? कौन किसके प्रति अन्याय कर रहा है? इस समय राजा, रानी और युवराज कहाँ है?"

"इन बातों से तुम्हें क्या मतलब? अगर बहुत दखल दोगे तो बहुत बुरा परिणाम होगा। अब नये राज़ा का राज्य शुरू हो गया है। उनके विरोध में अगर कोई कुछ कहेगा, तो उसे मृत्यु-दंड की कड़ी सज़ा होगी! समझे?" ढिंढ़ोरा पीटनेवाले भट ने उलटा सवाल किया।

"राजा शान्तिदेव के शासन में हमें किसी प्रकार का अभाव नहीं है। हम सब शान्तिपूर्वक अपना जीवन यापन कर रहे हैं। यह हमारे राजा से संबंधित बात है, इसलिये उनकी प्रजा बने हमारे लिये भी यह समाचार उतना ही महत्त्वपूर्ण है। यही कारण है, कि मैं यह सवाल कर रहा हूँ।" युवक ने उत्तर में कहा।

"तब तो तुम हमारे साथ चलो, तुम्हें ज़रूर इसका जवाब मिलेगा।" भट ने कहा।

"मुझे तुम्हारे साथ जाने की क्या आवश्यकता है? कल तक तो हमारे राजा एकदम स्वस्थ थे। उसी हालत में अचानक उन्हें यह राज्य त्यागने की क्या ज़रूरत है? हमें यह बात ज़रूर मालूम होनी चाहिये। अगर कोई भी दण्ड भोगना पड़े तो उसके लिए मैं तैयार हूँ। मैं अन्याय कभी सहन नहीं करूँगा।" युवक ने फिर कहा।

राजभट इसपर कुछ नहीं बोला, मगर हाथ उठाकर उसने अपने अनुचरों को कुछ इशारा किया; और दूसरे ही पल चार सैनिकों ने आगे

मगर सुमेध की तुलना में अमृतपुरी का सैनिक-बल नगण्य सा था। रानी का पिता अपने कर्तव्य के बारे में विचार करने लगा।

वीरसिंह ने अपनी विजय के दूसरे ही दिन राजपुरोहित को बुलवाकर उसके सामने अपना राज्याभिषेक करवाने की इच्छा प्रकट की। राजपुरोहित ने इसपर अपना अभिप्राय प्रकट किया, "हमारे रिवाज़ के अनुसार, यदि राजा की मृत्यु हुई, या विश्राम करने के हेतु खुद वह राज्यपरित्याग करे, तभी नये राजा का अभिषेक किया जाता है। इसके अलावा राजा या राजपरिवार के अभीष्ट के अनुसार ही राज्याभिषेक होना चाहिये। ऐसी हालत में राजा शान्तिदेव की अनुमति के बिना मैं आप का राज्याभिषेक कैसे कर सकता हूँ?"

राजपुरोहित की ये बातें सुनकर वीरसिंह क्रोध में आ गया और उसने तीक्ष्ण दृष्टि से पुरोहित की ओर देखा। दूसरे ही क्षण राजभट उसे बन्दी बनाकर, कारागार में डालने के लिये ले गये।

तत्काल और एक पुरोहित को बुलावा भेजा गया और वीरसिंह का राज्याभिषेक बड़ी शीघ्रता से संपन्न हुआ।

शान्तिदेव के आप्त, मित्र और विश्वासपात्र व्यक्तियों को उनके पदों से हटाकर वीरसिंह ने अपने विश्वास पात्र व्यक्तियों को वे पद दे दिये।

राजसभा का आयोजन हुआ। तब प्रथम दिन ही वीरसिंह ने वृद्ध मन्त्री से कहा, "मन्त्रीवर, आप को विदित ही है, कि राज्य वीरभोज्य होता है। लेकिन शान्तिपुर राज्य

बढ़कर उसे बन्दी बनाया और वे उसे खींचकर ले गये। युवक ने उनके हाथों से छूटने की खूब कोशिश की; मगर उसकी एक न चली।

इस घटना को देख जनता ने भाँप लिया, कि ज़रूर किसी दुष्ट व्यक्तिने सिंहासन पर कब्जा किया है। अपने राजा और राजपरिवार पर क्या बीती होगी इस ख़याल से जनता चिन्तित हो उठी। मगर जो भी राजपरिवार के बारे में कुछ जानने की कोशिश करता, नाना प्रकार के उत्पीडनों का शिकार हो जाता था। इस कारण राजधानी नगर में स्मशान-शान्ति छा गयी।

शान्तिपुर में हुए विद्रोह का समाचार रानी के मायके अमृतपुरी राज्य में मालूम हुआ।

अनेक सालों से विजययात्रा पर नहीं गया है । हमारे सैनिक इससे सुस्त बन जायेंगे । पड़ोसी राज्यों को जीतकर आनन्द पानेका अनुभव प्राप्त न कर सकनेवाले राजा खुद को राजा कहलाने योग्य नहीं होते । इसलिये बताइये, कि सर्व-प्रथम हमें किस राज्य पर धावा बोल देना उचित होगा?" मूँछों पर ताव देते हुए विरसिंह ने यह सब पूछा ।

वृद्ध मन्त्री उठ खड़े हुए और धीरे से साँस खींच कर बोले , "सेनापति!.....एक बात ..... ।" मगर उनको बीच ही में टोकते हुए वीरसिंह ने कहा, "मुझे सेनापति कहकर पुकारने की यह कैसी हिम्मत तुम्हारी! हाँ, कल तक मैं सेनापति था अवश्य, लेकिन आज से मैं इस समृद्ध शान्तिपुर राज्य का विजयी राजा हूँ । इसलिये आज से मुझे 'राजा' कहकर पुकारने में ही तुम्हारी भलाई है; समझे?" यह कहकर अपना कटा कान सभासदों की दृष्टि से बचाने के लिये उसने अपना मुकुट ठीक किया ।

"जो आज्ञा! मगर प्रथम पड़ोसी राज्यपर हमला करने की अपेक्षा हमारे राज्य की प्रजा की सुख-समृद्धि के लिये प्रयत्न करना शासकों का आद्य कर्तव्य है; ऐसा मेरा विचार है ।" मन्त्री ने कहा ।

"आप का विचार कुछ भी हो सकता है, पर अन्तिम निर्णय तो हम स्वयं लेते हैं । लेकिन आप को यह बात याद रखना अत्यन्त आवश्यक है, कि मुझे आप 'महाराज' कहकर संबोधित नहीं कर रहे हैं !" वीरसिंह ने क्रुद्ध होकर कहा ।

"मैं वृद्ध हो चुका हूँ । अपनी पुरानी आदतें बदलना, मेरे लिये आसान नहीं है । आप यदि अनुमति दे दें, तो मैं अपने मन्त्रिपद से मुक्त होकर विश्राम कर लेना चाहता हूँ ।" मन्त्री ने प्रार्थना की ।

"मन्त्री पद से ही नहीं, मैं चाहूँ तो आप को ज़िंदगी से भी पूर्ण विश्राम दे सकता हूँ! अच्छी तरह से याद रखो!" वीरसिंह गरज उठा ।

मंत्री ने कोई प्रतिवाद नहीं किया । बल्कि हाथ उठा कर इस प्रकार संकेत किया, कि मानो वह सुझा रहा हो, तुम अपनी इच्छानुसार कुछ भी करो ।

"तब तो मैं इसी क्षण तुम को मन्त्रीपद से हटा रहा हूँ ।" वीरसिंह ने कहा ।

मन्त्री ने हाथ जोड़कर सभा को प्रणाम किया, और चुपचाप सभा-भवन से बाहर चले गये। उसको निकलते देख, वीरसिंह व्यंगपूर्वक हँस पड़ा। इसपर उसके सभी अनुचर अट्टहास कर उठे, जिससे सारा भवन गूँज उठा।

वृद्ध मन्त्री उस शाम को हमेशा के जैसे नगर सीमा पर स्थित शिवाले में ईश्वर-दर्शन कर लौट रहा था। सूर्यास्त हो चुका था और चारों ओर अँधेरा फैलता जा रहा था। दोनों तरफ वृक्ष और झाड़ियों से व्याप्त रास्ते से होकर मन्त्री चल रहा था, तब हठात् एक वृक्ष के पीछे से तीन सिपाही आगे कूद पड़े। एक ने मन्त्री के हाथ पकड़ लिये, दूसरे ने उसके मुँह पर हाथ रखकर ज़बरदस्ती से इस प्रकार दबाया कि वह चिल्ला न सके। तीसरे ने रास्ता दिखाया, और बाकी दोनों उसे खींचकर ले जाने लगे।

अपने को उनकी पकड़ से बचाने की ताकत उस बूढ़े शरीर में थी ही नहीं, इसलिये भगवान पर भरोसा रखकर मन्त्री मौन ही रहा। अब तीसरे सिपाही की तलवार अचानक चमक उठी। लेकिन वार होने से पहले, उसी क्षण तलवार उछलकर दूर जा गिरी; और 'खन आवाज़' वातावरण में गूँज उठी। पीड़ा से कराहकर सिपाही ने पीछे मुड़कर देखा। बाकी दोनो सिपाही भी मन्त्री को छोड़ कर वास्तविक स्थिति को समझने के लिये इधर-उधर ताकने लगे। लेकिन उन्हें ज़रा भी मौक़ा दिये बगैर किसी ने पलभर में ही उनके सिर तलवार की एक ही फटकार से हवा में उड़ा दिये!

बिजली की कौंध जैसी तलवार के वार से तीनों सिपाहियों का वध करनेवाले वीर ने मन्त्री से कहा, "कल प्रातःकाल तक इन हत्यारों की मृत्यु का समाचार कोई जान नहीं सकेगा। आप रात ही रात यह राज्य छोड़ कर अमृतपुरी पहुँच जाइए।"

"आप ....!" कहकर मन्त्री कुछ और कहने को हुआ। मगर "और अधिक बात नहीं कीजिये।" ऐसी चेतावनी देकर वह वीर अँधेरे में विलीन हो गया।

अड़ोस-पड़ोस

भूषणशाह वैसे धनवान था, लेकिन एकदम कंजूस! गाँववाले किसी धार्मिक कार्य के लिये चन्दा माँगने आते, तो वह दो टूक जवाब देता—"धार्मिक कार्य मानकर चन्दा दे दूँ, तो मेरा दीवाला निकल जाएगा। पाठशाला, मन्दिर, भजन-पूजन, उत्सव आदि नाम लेकर मुझे न सताओ इतना ही नहीं, मैं तो मानता हूँ कि, कुएँ खुदवाना, सड़कें बनवाना वगैरह काम सरकार को करने चाहिये। तुम लोग जाकर सरकारी अफसरों पर दबाव डालकर ये काम करवा लो। इन कामों के लिए हम से पैसा माँगने की क्या ज़रूरत है? सरकार को अपने काम पूरी ज़िम्मेदारी से करने चाहिए।"

अपने पति के व्यवहार से भूषणशाह की पत्नी असंतुष्ट थी; मगर वह उसका मन अच्छी तरह जानती थी, इसलिये मौन रहती थी। मन-ही-मन वह मानती थी कि पति का व्यवहार बिलकुल योग्य नहीं है। वे बड़े कंजूस है और ज़रा भी दूसरों के काम नहीं आना चाहते। आखिर इस संचित धन से करना ही क्या है?

भूषणशाह के पड़ोस में रामसहाय नामका एक किसान रहता था। उसने कहीं से एक ख़ास किस्म का आम का पौधा लाकर अपने घर के पिछवाड़े में रोप दिया। क्रमशः वह पेड़ फल देनें लगा। उन फलों के बारे में लोग विविध प्रकार से चर्चा करते थे।

पड़ोस में आँखों को तृप्त करनेवाले आम देख कर भूषणशाह के मुँह में पानी भर आया। वह कुछ दिनों तक यह सोच कर प्रतीक्षा करता रहा, कि रामसहाय एक न एक दिन थोड़े से आम हमारे घर भेजेगा। पेड़ जो फल देगा, सब को वह थोड़े ही खा सकता है? कुछ हिस्से का तो अड़ोस-पड़ोस में वितरण करेगा ही। लेकिन रामसहाय ने भूषणशाह

रूसी लोककथा

के ही नहीं, बल्कि किसी के भी घर आम नहीं भेजे ।

एक दिन आधी रात के समय भूषणशाह का तेरह साल का बेटा गुरुनाथ पिछवाड़े की दीवार लाँघकर गया और कुछ आम तोड़कर ले आया । आम ले आते समय उसकी माँ लक्ष्मी ने उसे देखा ।

गुरुनाथ को पकड़कर लक्ष्मी ने डाँटा, "अरे दुष्ट, यह कैसा दुष्ट कार्य कर रहे हो? पड़ोसी के घर के पेड़ के फलों की चोरी तुमने क्यों की? ऐसा काम करना तुम्हें शोभा नहीं देता ।"

इसपर लड़के ने जवाब दिया, "माँ, यह कोई बुरा काम नहीं है । इतने सुन्दर फल उस पेड़ में लगे हैं, जो आस पास कहीं भी मिलते नहीं है । मगर रामसहाय तो पक्का कंजूस है । वे आम खाने के लिये पिताजी भी ललचा रहे हैं । यह बात मैं जानता हूँ । मैंने कोई बुरा काम नहीं किया है । कंजूस को एक पाठ पढ़ाना ही चाहिए ।"

बगलवाले कमरे में बैठा भूषणशाह अपने बेटे का उत्तर सुनकर बहुत खुश हुआ । मगर लक्ष्मी ने क्रोध पूर्ण स्वर में कहा, "ओह, तुम्हें इस बात से ईर्ष्या है कि रामसहाय अपने फलों में से थोड़ा भी हिस्सा किसी को नहीं दे रहा है । मैं भी बराबर देखती आयी हूँ, कि तुम्हारे पिता किस प्रकार ललचायी नज़र से आमों की तरफ़ देखते हैं । मगर मैं यह भी तो जानती हूँ, कि जो संपत्ति या चीज़ें हमारे पास खूब हैं, उन्हें दूसरों में न बाँटना स्वार्थ व कंजूसी है ।"

"तब तो माँ, तुम मुझ पर क्यों ख्वाहम्

ख्वाह नाराज़ हो रही हो?" गुरुनाथ ने पूछा ।

"किस लिये? जानना चाहते हो? तुमने रामसहाय की तो आलोचना की, मगर तुम्हारे पिता की बात क्या है? हमारे गाँव में कोई पाठशाला या धर्मशाला नहीं है । हम भी कोई ग़रीब तो नहीं हैं, ख़ासे अच्छे संपन्न हैं । फिर भी क्या तुम्हारे पिता जनता के कल्याणकारी कार्यों में चन्दा देकर मदद पहुँचाते हैं?" लक्ष्मी ने पूछा ।

गुरुनाथ इसपर कुछ कहने को हुआ । मगर उसी समय भूषणशाह अपने कमरे से बाहर आया और बोला, "अरी, वह तो एक लड़का है, बच्चा है । नये किस्म के आम खाने की आशा से थोड़े फल तोड़ लाया है । इसको तुम 'चोरी' कहकर उसे डाँटो मत ।"

इसपर लक्ष्मी मन्दहास करके बोली, "किसी की संपत्ति है, उसे कोई प्रलोभन, आशा या आवश्यकता से लूट ले, तो हम उसे क्या कहेंगे?"

यह सुनकर भूषणशाह तिलमिलाकर बोला, "आम चुराकर लानेवाले हमारे बच्चे को तुम जो डाँट रही थी, वे सारी बातें मैं ने सुन लीं हैं ।"

"अभी थोड़ी देर पहले तुम ने इसे 'चोरी' नहीं बताया था, फिर अब कैसे चोरी हो गयी?" लक्ष्मी ने पूछा ।

भूषण ने कहा—"कल से मैं सिद्ध करूँगा कि मैं पूर्णतः बदला हूँ ।"

फिर क्या! दूसरे ही दिन वह गाँव के प्रमुख व्यक्तियों से मिला और जनता के कल्याणकारी कार्यक्रमों के लिये उसने कुछ धन दे दिया ।

भूषणशाह के मन में हुए इस परिवर्तन पर ग्रामवासी बहुत खुश रहे । रामसहाय अपने पेड़ के कुछ आम खुद उसके घर ले जाकर, उसके हाथ में थामते हुए बोला, "भूषणशाहजी, आजतक मुझे यह बात ध्यान में भी न आयी कि हम एक दूसरे के पड़ोसी होनेके नाते हमारा कुछ रिश्ता है ।"

यह सुनकर भूषणशाह के साथ लक्ष्मी भी बहुत प्रसन्नतासे हँस पड़ी ।

दिव्य शक्तियों की परीक्षा

दृढव्रती विक्रमार्क वृक्ष के पास लौट आये, वृक्ष पर से शव उतारा और उसे कंधेपर लादकर, सदा की भाँति मौन होकर स्मशान की ओर चलने लगे । तब शव में रहनेवाला बेताल बोल उठा, "राजन्, मुझे मालूम नहीं है, कि एक देश के राजा के रूप में आप ने कितनी कीर्ति और प्रतिष्ठा पायी है । मेरे विचार में, एक राजा के लिये, केवल धार्मिक वृत्ति, पराक्रम और बुद्धिमत्ता जैसे गुण पर्याप्त नहीं हैं । इनके साथ सूक्ष्मबुद्धि तथा मानसिक सन्तुलन की भी आवश्यकता होती है । मेरे मन में तो यह सन्देह है कि शायद उक्त दोनों गुणों के कारण ही आप इस अर्द्ध-रात्री के समय कोई असाध्य कार्य साधने के विचार से इस स्मशान में भटक रहे हैं । राजा माधवसेन की भाँति, कुछ लोग ऐसे पाप व अपराध के लिये स्वयं दण्ड भोगते हैं, जिन से वे कोसों दूर होते हैं । इसका कारण यही है कि, उनके भीतर सूक्ष्मबुद्धि और मानसिक

बेताल कथा

स्थैर्य का अभाव था । आप के श्रम भुलाने के लिये मैं उनकी कहानी आपको सुनाता हूँ, ध्यान से सुनिए ।"

बेताल कहानी सुनाने लगा ।

किसी समय कोसल देश पर माधवसेन नाम का राजा राज्य करता था । वह जनता को अपनी संतान ही मानता था । प्रजा का भी दृढ़-विश्वास था कि, जनता के हित-चिंतन के विषय में अपने राजा के बराबरी का कोई अन्य राजा तीनों लोक ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा । इस लिए सारी प्रजा माधवसेन से अत्यन्त प्रेम करती थी । उन्हें भगवान के समान मानती थी । अगर माधवसेन के संबंध में कोई कुछ अपशब्द कहे, तो उसे प्रजा बिलकुल मानती न थी ।

एक बार कोसल देश में अग्निनेत्र नाम का एक मान्त्रिक आया । अपनी क्षुद्र-विद्याओं के बल से जनता को डराकर वह अपना स्वार्थ साधने लगा । इस प्रकार अपने लिये उसने एक विशाल भवन बनाया और उस में रहकर समस्त प्रकार के सुखों का अनुभव करते हुए, वह जनता को सताने लगा । जनता उसके नाम से ही थर थर काँपती थी । इस डर के कारण ही कोई भी व्यक्ति उसके संबन्ध में राजा से कोई शिकायत करने का साहस नहीं कर सका । अग्निनेत्र निर्भय होकर राज्य में रहने लगा । उसका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता था । उसकी विशेष शक्तियाँ नित्य उसकी मदद करतीं ।

मगर अपने भेदियों के द्वारा अग्निनेत्र के अत्याचारों का समाचार राजा के कानों तक पहुँचा । फिर क्या था, राजा ने तत्काल ख़बर भेज कर उसे दरबार में बुलाया ।

माधवसेन को विनयपूर्वक प्रणाम कर अग्निनेत्र ने कहा, 'श्रीराजन्, आप के राज्य में आप की प्रजा तथा मैं भी अत्यन्त सुखपूर्वक अपना जीवन यापन कर रहे हैं । इसलिये मैं आप को प्रणाम कर रहा हूँ । आपके समान आदर्श राजा ढूँढ़ कर भी नहीं मिलेगा । प्रजा आपका नित्य गुणगान करती है । आपके राज्य में रहना मेरे लिए गर्व की बात है ।"

राजा माधवसेन ने शान्त भाव से कहा, "तुम्हारी विनयशीलतापर मैं बहुत प्रसन्न हूँ । और यदि तुम इसी समय मेरा राज्य छोड़ कर कहीं चले जाओ, तो मैं और भी अधिक प्रसन्न

हो जाऊँगा । तुम्हारे कार्यकलापों को मैं अच्छी तरह जान गया हूँ । अब अगर अपनी खैरियत चाहो; तो आप होकर यहाँ से चले जाओ । और अगर हठपूर्वक यहाँ रहोगे, तो उसके परिणामों के लिए तैयार रहो ।"

"महाराज, मुझ जैसा मान्त्रिक जिस देश में रहेगा, वह देश सब से अधिक आदर प्राप्त करेगा । मैं जानना चाहता हूँ, कि किस कारण आप मुझे राज्य से चले जाने को कह रहे हैं? आप बड़े न्याय-प्रेमी हैं । अकारण किसी को दंड नहीं देंगे! मैंने क्या ग़लत काम किया है कि आप मुझे राज्य छोड़ जाने की आज्ञा दे रहे हैं?" अग्निनेत्र ने सवाल किया ।

"तुम्हारी बुद्धि ठीक नहीं है । तुम बहुत स्वार्थी हो । मेरे राज्य में तुम जैसे लोगों के लिये कोई स्थान नहीं है । अपनी दुष्ट-शक्तियों के बल से प्रजा को सताकर तुम सुखोपभोग ले रहे हो ।" माधवसेन ने कहा ।

इसके उत्तर में विकट अट्टहास करते हुए अग्निमित्र ने कहा, "महाराज, हर देश में यही होता है कि बलवान व्यक्ति हमेशा दुर्बल व्यक्ति से अधिक सुख पाता है । आप क्या यह समझते हैं, कि आप जनता से जो कर वसूल करते हैं, उसे जनता प्रसन्नतापूर्वक चुका रही है? क्या आप के सभी कानूनों से प्रजा सहमत है? जनता मेरे बारे में कभी कोई शिकायत नहीं करती, इससे सिद्ध होता है कि मैं भी एक उत्तम व्यक्ति हूँ । अब रही स्वार्थ की बात! जनता से कहीं अधिक वैभवपूर्वक

जीवन बिताते हुए सुख भोगनेवाले खुद आप क्या स्वार्थी नहीं हैं? तो क्या इस कारण आप भी देश छोड़ कर चले जायेंगे?"

"राजा लोग राजभवन में निवास करते हैं, वह एक रिवाज़ है; इस में कोई ज़्यादा सुख वगैरह भोगने की बात नहीं है । तुम अगर यह प्रमाणित करोगे कि मैं स्वार्थी हूँ; तो निश्चय ही मैं राज्य छोड़कर चला जाऊँगा ।" राजा माधवसेन ने उत्तर दे दिया ।

अग्निनेत्र विकट अट्टहास करके बोला, "मैं आप से तर्क करना नहीं चाहता । आप ने अकाराण ही मुझे राज्य छोड़ कर चले जाने का आदेश दिया है । अब मैं आप की पुत्री को अपने साथ ले जाता हूँ । आप जो भी कर

सकते हैं, कीजिये ।" इतना कहकर मान्त्रिक वहाँ से गायब हो गया ।

बस, उसी समय माधवसेन की इकलौती बेटी माधवीलता भी अंतःपुर से अदृश्य हो गयी ।

महाराज माधवसेन की समझ में नहीं आ रहा था, कि ऐसे में क्या किया जाय । इस पर मन्त्री ने उन्हें सुझाव दिया, "आप तो युवरानी के लिये योग्य वर का चुनाव करना चाहते थे न? तो इस स्थिति को हम एक मौका ही मान लेंगे । मेरा सुझाव है कि, जो वीर मान्त्रिक का संहार करके राजकुमारी की रक्षा करेगा उसी वीर को आप अपने राज्य के साथ युवरानी माधवीलता को भी सौंप दीजिये ।"

इस सुझाव को मानने के सिवा और कोई चारा ही नहीं है, यह देखकर राजा ने सुझाव स्वीकार कर लिया । तत्काल इस आशय का ढिंढ़ोरा पिटवाया गया । राजकुमारी के साथ राज्य भी हासिल करने के ख्याल से कई युवक आगे आये ।

इस बीच माधवसेन भी चुप न रहे । वे अन्तःपुर के भूतल-गृह में स्थित महादेवी के मन्दिर में गये और देवी की प्रार्थना की, "माते, मैं खुद वीरतापूर्वक दुष्टों का सामना तो कर सकता हूँ; मगर दुष्ट शक्तियों का सामना करने के लिये मेरी शक्ति पर्याप्त नहीं है । तुम्हीं मुझे शक्ति दो, माँ!"

इसपर प्रत्यक्ष होकर-देवी ने कहा, "राजा, कुछ दिव्य शक्तियाँ तुम्हारी परीक्षा ले रही है; चिन्ता न करो । मैं तुम्हें यह खड्ग दे रही हूँ । उसके स्पर्श मात्र से कितनी भी ज़बर्दस्त दुष्ट शक्ति भी नष्ट हो जाएगी ।" और राजा

के हाथ एक खड्ग देकर देवी अदृश्य हो गयी।

उस खड्ग को म्यान में रखकर माधवसेन सुखपूर्वक सो गये।

एक हफ़्ता बीत गया। एक दिन एक अपूर्व तेजवाले युवक के साथ माधवीलता लौट आयी।

माधवसेन को झुककर प्रणाम कर युवक ने कहा, "अग्निनेत्र का वध-करके मैं माधवीलता को साथ ले आया हूँ। मेरा नाम अग्निसेन है। कहा जाता है, कि मेरे पूर्वजों ने विदेह राज्यपर शासन किया था। अतः मैं भी एक राजघराने में पैदा हुआ युवक हूँ।" इस प्रकार युवक ने अपना परिचय दिया।

इस पर माधवसेन ने झट अपने म्यान से खड्ग खींचा और अग्निसेन पर वार किया। राजा के इस विचित्र व्यवहार पर सभासदों के साथ माधवीलता भी विस्मय में आ गयी। मगर अग्निसेन पर इसका ज़रा भी प्रभाव नहीं हुआ। वह हँसता हुआ अविचल खड़ा था।

माधवसेन तत्काल वहाँ से चले गये। अग्निसेन और माधवीलता का विवाह हुआ।

विवाह के बाद अग्निसेन का राज्याभिषेक कराया गया। उस समय अग्निसेन का स्वरूप अचानक अग्निनेत्र के रूप में बदल गया। उसने मन्दहास करके माधवसेन से कहा, "महाराज, युवरानी के साथ मैं ने विवाह करना चाहा और इस देश का राजा बनने का सपना देखा। इन दो इच्छाओं की पूर्ति के लिये मैं ने अपनी सारी शक्तियों का उपयोग किया। सब से पहले मैं ने
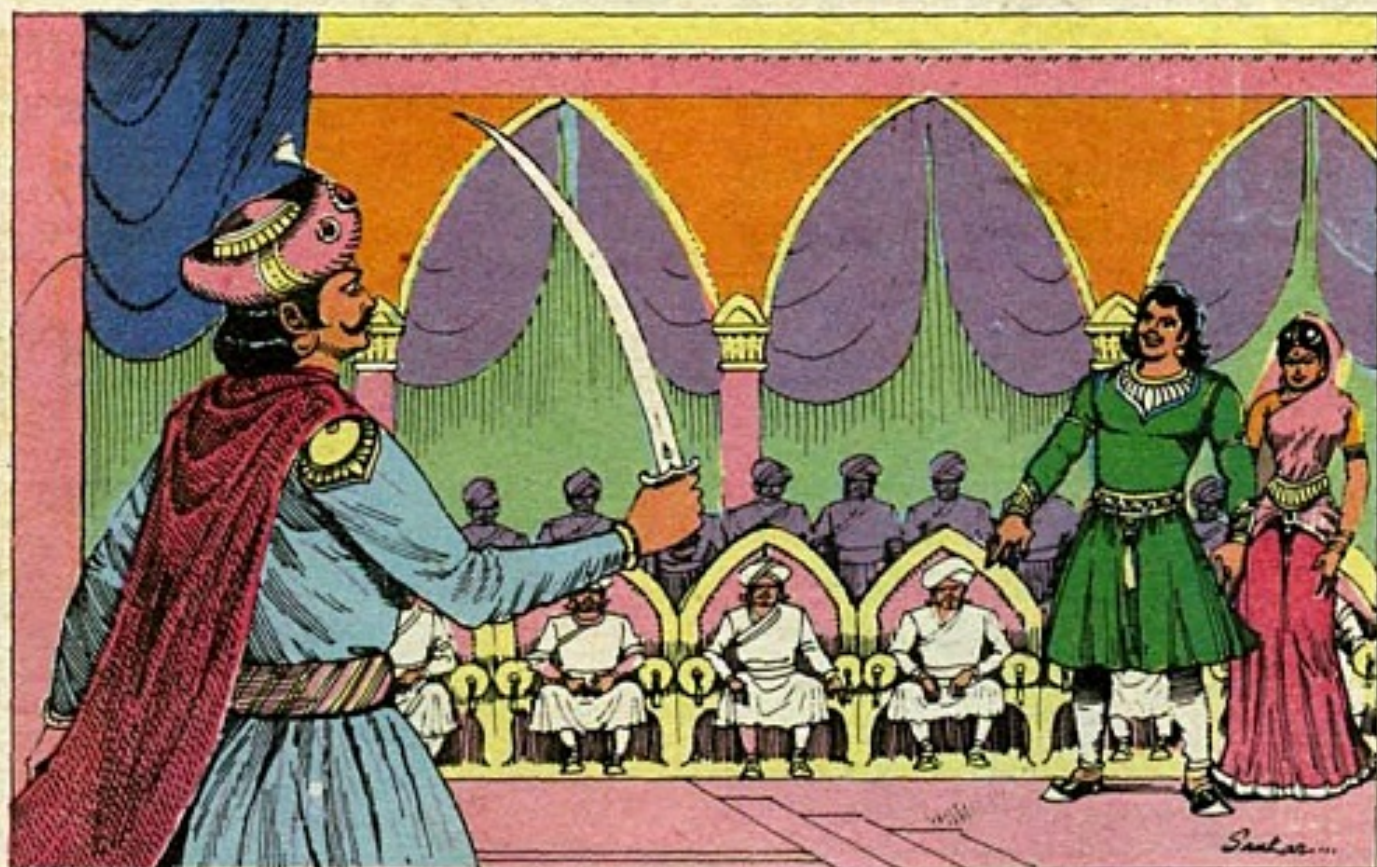
माधवीलता का अपहरण किया और बाद में मैंने ही उसे आप के हाथ सौंप दिया ।"

कुछ सोचते हुए माधवसेन थोड़ी देर मौन रहे; फिर बोले, "अग्निसेन, तुम एक साधारण क्षत्रिय युवक हो । मेरी परीक्षा लेने के लिये ही किन्हीं दिव्य शक्तियों ने तुम्हारा उपयोग किया है । कोसल के राजपद से न्यायपूर्वक शासन करो । मैं इस परीक्षा में हार गया हूँ । अपने पापों के परिहार के लिये मैं वन में जाकर तपस्या करूँगा और फिर लौट आऊँगा ।" यह कहकर राजा वहाँ से चले गये ।

इसके बाद दूसरे ही क्षण अग्निनेत्र का स्वरूप अग्निसेन में बदल गया ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा, "राजन, माधवसेन का कहना अर्थहीन नहीं है, कि उसने पाप किया है, इसलिए वन में जाकर वे तप करना चाहते हैं? राजा का यह कहना, कि वे पाप-परिहार करना चाहते हैं, बुद्धिहीनता और मानसिक स्थैर्य खोना नहीं है? आप इस सन्देह का समाधान जानकर भी नहीं करेंगे, तो आप का सिर फट कर टुकड़े टुकड़े हो जाएगा ।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "माधवसेन का यह कहना, कि उसने पाप किया है—सच ही है । राज्य तो उनकी निजी संपत्ति नहीं है, बल्कि उनका उत्तरदायित्व है । उसे समर्थ हाथ में ही सौंपना चाहिये । माधवसेन ने अपनी पुत्री के प्रति ममता के कारण यह घोषित किया, कि जो भी व्यक्ति उनकी बेटी की रक्षा करेगा, उसको वह दामाद बनाकर अपना राज्य सौंप देंगे ।—यही माधवसेन द्वारा किया गया पहला पाप है । कुलदेवी ने उन्हें कुछ अद्भुत शक्तियों से पूर्ण खड्ग सौंपकर चेतावनी दी, कि कुछ दिव्य शक्तियाँ उनकी परीक्षा ले रही हैं, फिर भी माधवसेन ने उस चेतावनी की उपेक्षा की । यह उनका दूसरा पाप है । इन बातों से परिचित होकर वे वनवास के लिये चले गये ।"

इस प्रकार राजा का मौन भंग होते ही शव के साथ अदृश्य होकर बेताल पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)

अवंती - उज्जैन

महाभारत युद्ध के पहले ही जिसको प्रसिद्धि प्राप्त हुई ऐसा राज्य है अवंती । इसका एक और नाम है अवंतिका । एक ज़माना था जब अवंती दो राज्यों में विभाजित था । दक्षिण अवंती की राजधानी थी महिषती जो आज मांधाता कहलाती है । उत्तर अवंती की राजधानी थी उज्जयिनी या उज्जैन । आज यह नगर इसी नाम से मध्य प्रदेश के
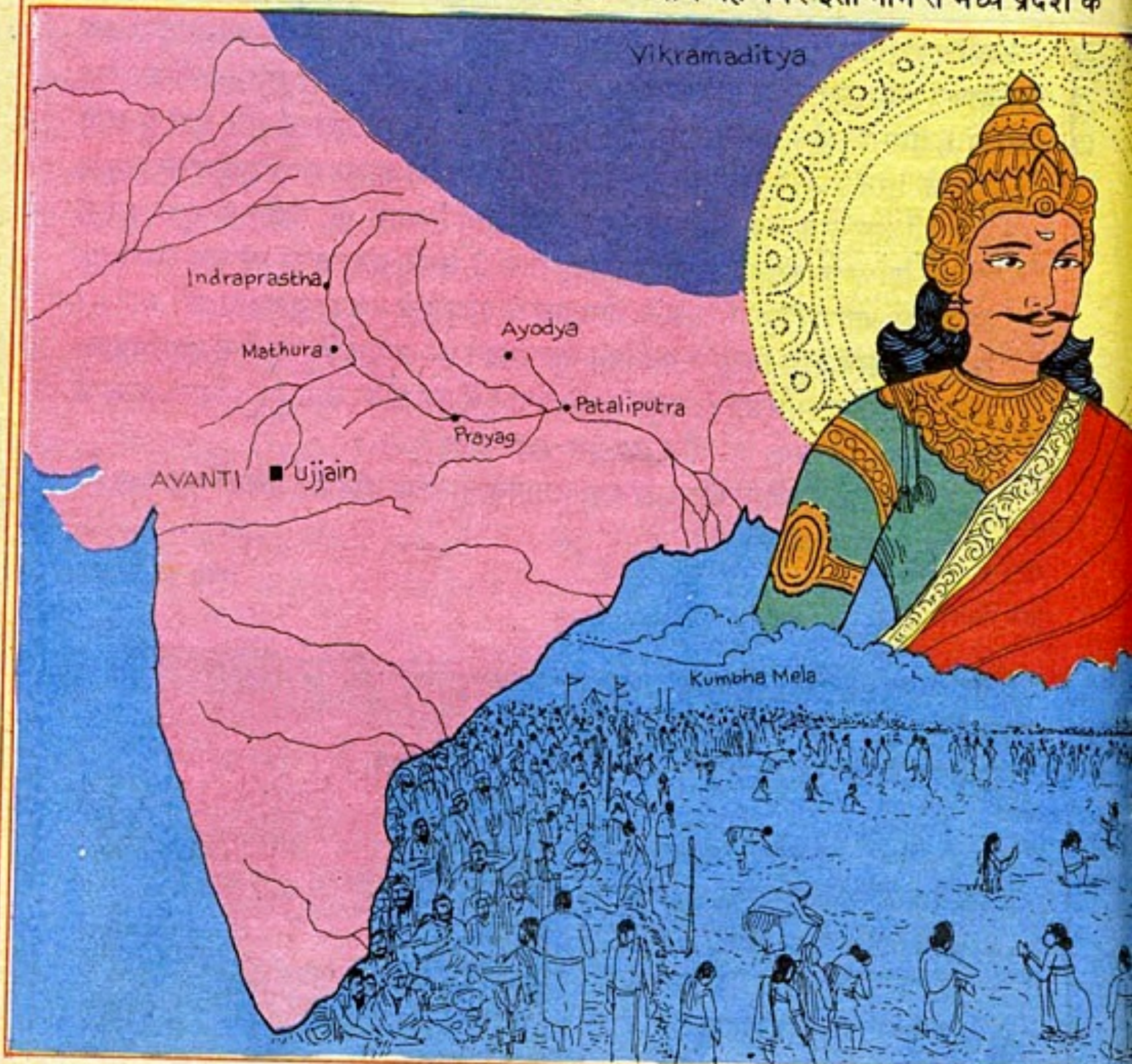
मालवा में है ।

प्राचीन बौद्ध वाङ्मय में बताया गया है कि ढ़ाई हज़ार वर्ष पहले भारत देश सोलह जनपदों में विभाजित था। उन सोलह जनपदों में एक अवंती है ।

उज्जैन न केवल एक अत्यन्त प्राचीन नगर है; बल्कि वह हमारे देश के सात पवित्र नगरों में से एंक है ।

सुप्रसिद्ध सम्राट विक्रमादित्य ने उज्जैन को अपनी राजधानी बना कर शासन किया था। उनके दरबार के नव-रत्नों में कालिदास जैसे विश्व-विख्यात कवि थे । महाकवि कालिदास ने अपने खंड-काव्य 'मेघदूत' में उज्जैन नगर के सौंदर्य का तथा क्षिप्रा नदी की भव्यता का बढ़िया वर्णन किया है। उस नगर में स्थित 'महाकाल' नामक शिवालय का भी उन्होंने सुंदर चित्रण किया है ।

सम्राट अशोक ने मौर्य राज सिंहासन पर आरूढ़ होने के पहले मौर्य राज्य के प्रतिनिधि के रूप में उज्जयिनी नगर पर शासन किया था ।

बारह वर्षों में एक बार लगनेवाले कुंभ मेले का उत्सव आज यहाँ बड़े वैभव के साथ मनाया जाता है ।

चन्दामामा के संवाद

संस्कृत के प्रति विदेशों में अभिरुचि

भारत की अत्यंत प्राचीन भाषा संस्कृत के प्रति इधर विश्व भर के विद्वान एक विशेष अभिरुचि दिखा रहे हैं । अमेरिका के निवासी व्यास होस्टन तथा डेविड लाविन ने संयुक्त रूप में संस्कृत सिखाने के लिए एक कॉम्प्यूटर प्रोग्राम का निर्माण किया है । इसके माध्यम से पश्चिम के निवासियों को भी संस्कृत शब्दों का सही उच्चारण करना व उन्हें पढ़ना तथा आसानी से सीखना संभव हो गया है ।

शेक्सपियर का नाटय-मंच

शेक्सपियर के प्रेमी जब लंडन जाते हैं, तब उस ग्लोब थिएटर को देखना चाहते हैं जहाँ शेक्सपियर के नाटकों का मंचन हुआ करता था । पर वह मंच इस समय कहाँ है? वह तो बहुत पहले नष्ट हो गया है । सन १६१३ में जब उस थिएटर में 'आठवाँ हेन्री' नाटक का मंचन हो रहा था, तब उसमें आग लग गई थी । बाद में उसका पुनर्निमाण किया गया था ।

लेकिन सन १६१६ में शेक्सपियर का निधन हो गया । इसके साथ ही उस थियटर का आकर्षण भी घट गया । ग्लोब थिएटर के अवशेषों का हाल ही में पता चला है । भविष्य में यह थिएटर पुनः अनेक लोगों के आकर्षण का केन्द्र बन सकता है ।
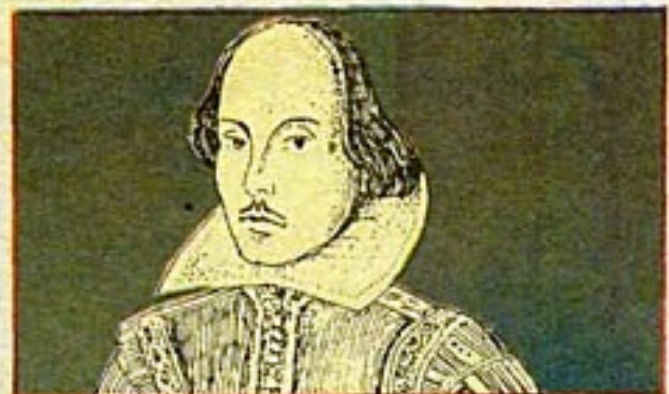
साहित्यावलोकन

१. सुप्रसिद्ध लेखक मैक्सिम गोर्की का वास्तविक नाम क्या है?

२. प्रमुख साहित्यिक जॉर्ज आर्वेल का असली नाम क्या है?

३. प्रसिद्ध रचयिता साकी का पहलेवाला नाम क्या है?

४. अपनी प्यारी पालतू बिल्ली को कंधे पर बिठाकर काव्य-रचना करनेवाले मशहूर कवि कौन हैं?

५. कौन प्रसिद्ध कवि अपने पालतू जानवर व पंछियों के साथ यात्रा करता था?

६. बहुभाषा-शास्त्री तथा कथा-साहित्य के लोकप्रिय प्रणेता कौन हैं?

उत्तर

वह कौन?

नाला महाराज, पुरी में स्थित जगन्नाथ मंदिर।

सामान्य ज्ञान

१. अहमदाबाद में

२. उदयपुर

३. मन्नार खाड़ी

४. रामेश्वर

५. शिव मंदिर

६. यहाँ के शिव लिंग को श्रीरामचन्द्र ने प्रतिष्ठापित किया था।

साहित्य

१. अलेक्सी सियशकोव

२. एरिक ब्लेयिर

३. व्हिक्टर हयूगो मन्त्रो

४. एड्गर अलेन पो

५. लॉर्ड बायरन
दस घोड़े, आठ बड़े कुत्ते, पाँच बिल्लियाँ, एक गीध तथा एक कौए के साथ यात्रा करते थे।

६. जाकोब ग्रिम (१७८५-१८६३)

नेहरू का कहानी १३

सरकारी अधिकारियों ने दमन-चक्र चलाया और नेताओं को जेलों में ठूँसा, इस से राष्ट्रीय आंदोलन ने और तीव्र रूप धारण किया। ब्रिटिश सरकार ने महसूस किया कि अब भारत को स्वतंत्रता अवश्य ही देनी पड़ेगी। १९४५ में सरकार ने पं. नेहरू को जेल से मुक्त कर दिया।

वाइसराय ने पं. नेहरू के नेतृत्व में तात्कालिक सरकार का प्रबंध किया। मुस्लीम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना ने धर्म के आधार पर देश का विभाजन करने का हठ किया। पं. नेहरू ने जिन्ना को कई प्रकार से अनुरोध किया कि वे अपनी इस इच्छा को छोड़ दें। पर वे अपनी बात पर डटे रहे।

दूसरे महायुद्ध के योद्धा तथा ब्रिटिश राज-परिवार से संबंधित लॉर्ड माउंट बॅटन सन १९४७ में हिन्दुस्तान के वाइसराय—गवर्नर जनरल बनकर भारत आये। ब्रिटिश सरकार ने उनको खास इस लिए भेजा था कि वे भारतवासियों को शासन का अधिकार सौंपने का कार्य शांतिपूर्वक संपन्न करें।

देश का बँटवारा करने का हठ करके मुस्लिम लीग ने 'प्रत्यक्ष आंदोलन' चलाने का आवाहन किया । हिंदुओं पर धावा बोल दिया, जिस का हिंदुओं ने प्रतिकार किया । देश में सर्वत्र खास तौर पर पंजाब तथा बंगाल में सांप्रदायिक दंगे चले ।

आखिरकार कॉंग्रेस को देश के बँटवारे के लिए विवश होकर मानना पड़ा । पं. नेहरू ने ३ जून, १९४७ को देशवासियों को आकाशवाणी पर यह निर्णय सुनाया । दोनों धर्मों के लाखों अनुयायी यह निर्णय सुनकर दुखी हुए । तत्काल देश में बँटवारे का प्रबंध किया गया ।

१५ अगस्त, १९४७ को हमारे देश ने स्वतंत्रता प्राप्त की । पं. जवाहरलाल नेहरू स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधान-मंत्री बने । उन्होंने देश की सारी जनता को आवाहन किया कि वे नव-भारत के निर्माण में यथाशक्ति योगदान दें ।

स्वतंत्रता के साथ हमारे देश के सामने कई नई समस्याएँ पैदा हुईं । ३० जनवरी १९४५ को महात्मा गांधी दिल्ली में गोलियों के शिकार बने । राष्ट्रपिता के लिए सारे देश ने आँसू बहाये । पं. नेहरू को बड़ा आश्चर्य लगा, फिर भी वे देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के कार्यक्रम में जुट गये ।

कुछ रियासती राजाओं ने स्वाधीनता के सपने देखे कि वे स्वतंत्र राज्यों के रूप में कायम रहें । कुछ तो प्रत्यक्ष संघर्ष पर उतर पड़े । हैदराबाद में प्रखर हिंसा-कांड प्रारंभ हुआ । हैदराबाद रियासत के समर्थक रज़ाकारों ने अत्याचार करना शुरू किया ।

कश्मीर के शासक महाराजा हरिसिंह ने घोषणा की कि उनकी रियासत स्वतंत्र भारत में विलीन होने के लिए तैयार है । परंतु उसका विरोध करने के लिए पाकिस्तान के कुछ हस्तकों ने वहाँ की जनता को भड़काया । अपने बल का प्रदर्शन करने के लिए वे श्रीनगर की ओर चल पड़े । लेकिन भारतीय सेना ने उनको मार भगाया ।

इस प्रकार की अनेक समस्याओं के बीच में पं. जवाहरलालजी ने हमारे देश तथा विश्व में शांति की स्थापना करने का अथक परिश्रम किया । सन १९५४ में चीन के प्रधान मंत्री चाऊ एन लाई भारत पधारे । उस समय पं. नेहरू ने चाऊ एन लाई के साथ शांतिपूर्वक सहजीवन बिताने की दिशा में सहायता पहुँचानेवाले 'पंचशील' सिद्धान्त के समझौते पर हस्ताक्षर किये ।

फिर भी सन १९६२ में चीन ने पंचशील सिद्धान्त का पूरी तरह अतिक्रमण करके भारत पर हमला किया । भारतीय सेना ने अपनी सीमा की रक्षा के लिए वीरोचित संग्राम किया । चीन की सेना वापस गई, पर उनके इस व्यवहार ने पं. नेहरू को आश्चर्य में डाल दिया ।

पं. जवाहरलालजी ने १७ साल भारत के प्रधान मंत्री का पद सँभाला । देश की प्रगति और विश्व में शांति के प्रयत्नों में पं. नेहरू ने इस शताब्दी के महान् राजनैतिक नेता के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त की । अंतिम साँस लेने तक देश और जनता के कल्याण के लिए परिश्रम करनेवाले हमारे प्रिय नेता पं. जवाहलाल नेहरू २७ मई १९६४ को मर कर अमर हो गये ।

स्वयंवर

मालव देश के राजा माधव वर्मा वृद्ध हुए, और उन्हें यह चिन्ता सताने लगी, कि उनके बाद राज्य किसी पराये व्यक्ति के अधीन होगा । उनके कोई पुत्र न था, इकलौती पुत्री थी, जिसका नाम था रत्नमाला ।

रत्नमाला खूब रूपवती और बुद्धिमती थी । लेकिन राज्य का भार वहन करने जितनी शक्ति-सामर्थ्य और दक्षता उसमें नहीं थी ।

माधववर्मा ने अपनी इस समस्या को मन्त्री सुगुणपाल के सामने प्रकट किया और उसे सुलझाने का उपाय पूछा ।

सुगुणपाल ने सलाह दी, "महाराज, आप इस संबंध में बिलकुल चिंता न करें । हमारे राज्य में सभी प्रकार की विद्याओं के साथ क्षत्रियोचित विद्याओं में भी प्रवीणता प्राप्त अनेक युवक हैं । आप युवरानी के स्वयंवर की घोषणा कीजिये । उसमें भाग लेकर सब से योग्य प्रमाणित होनेवाले युवक के साथ रत्नमाला का विवाह करा दीजिये । वही दामाद राज्य को समस्त कठिनाइयों से बचा सकेगा और सुचारु रूप से शासन भी करेगा ।

राजा को यह सलाह उचित लगी और बेटी की स्वीकृति लेकर राजा माधववर्माने इस आशय का ढिंढ़ोरा राज्य भर में पिटवाया ।

स्वयंवर में आये युवकों के बीच शास्त्र, तथा क्षत्रियोचित विद्याओं में विविध प्रकार की प्रतियोगिताएँ हुईं । उन में जयवर्मा नामक युवक ने सब को सभी विद्याओं में पराजित किया ।

उसका अभिनन्दन करके माधववर्मा ने कहा, "तुम मेरे होनेवाले दामाद हो, यह तो प्रमाणित हो ही गया कि तुम अब इस देश के राजा हो । मेरी पुत्री के साथ विवाह करके

अंजनीकुमार सिंह

राज्याभिषेक कराने के पूर्व तुम्हें एक और मुख्य कार्य साधना होगा ।"

"आदेश दीजिये; क्या है वह कार्य?" जयवर्मा ने उत्सुकता से पूछा ।

"हमारी राजधानी की उत्तरी दिशा में स्थित जंगल में उग्रसेन नाम का एक डाकुओं का नेता है । बहुत समय से वह उस प्रदेश की जनता में लूट पाट कर उन्हें नाना प्रकार की यातनाएँ दे रहा है । उसे बन्दी बनाने की मैंने अनेक प्रकार से कोशिश की । मगर हमें सफलता नहीं मिली । मालव देश के राजा के रूप में तुम्हारे लिये यह एक आव्हान जैसा है । किसी भी उपाय से सही, इस उग्रसेन को तुम्हें दबाना होगा । इसके लिये आवश्यक सैनिक भी तुम अपने साथ ले जा सकते हो ।" माधवसेन ने और एक परीक्षा रखी ।

थोड़ी देर सोचकर जयवर्मा ने कहा, "महाराज, सैनिकों को साथ ले जाने से यह कार्य संपन्न होनेवाला नहीं लगता । उन्हें देखकर डाकुओं का नेता अपने दल सहित किसी दूसरे स्थान को भाग जाएगा । मैं अकेला ही जाना चाहूँगा ।"

जयवर्मा अकेला जंगल में चला गया । उस प्रदेश के निवासियों में उसने उग्रसेन के बारे में पूछताछ की । इस दौरान में उग्रसेन के अनुचरों ने यह सब जान लिया और वे जयवर्मा को अपने नेता के पास ले गये ।

उग्रसेन को अपना परिचय देकर जयवर्मा ने कहा, "मैं ने इस राज्य के सभी वीरों को पराजित किया है । अपनी पुत्री का मेरे साथ विवाह कराके राजा माधववर्मा अपना राज्य मुझे सौंपनेवाले हैं । तुम अगर द्वन्द्व-युद्ध में

मुझे पराजित कर सकोगे तो तुम्हीं श्रेष्ठ वीर साबित होकर राज्य के साथ राजकुमारी को भी प्राप्त कर सकोगे ।"

यह सुनकर उग्रसेन बहुत ही आनन्दित हुआ और तुरन्त उसने अपनी तलवार खींची । उस वक्त दोनों में जो द्वन्द्व हुआ उसमें उग्रसेन ने बड़ी ही आसानी से जयवर्मा को पराजित किया । इसके बाद उसने राजधानी में प्रवेश करके राजा के दर्शन किये और उससे कहा, "महाराज, राजकुमारी के स्वयंवर के लिये आपने जिन प्रतियोगिताओं का आयोजन किया था, उन में सब को पराजित करनेवाले जयवर्मा को मैं ने हरा दिया । अब आप को अपने वचन के अनुसार राज्य और राजकुमारी भी मुझही को सौंपनी होगी ।"

इसी विचित्र परिणाम पर राजा हक्काबक्का रह गये । उसी वक्त वहाँ प्रवेश करके जयवर्मा ने कहा, "महाराज, यह उग्रसेन कहता है कि उसने मुझे हराया है; मगर मुझे हराते हुए आप में से किसीने भी उसे देखा नहीं है । इसलिये सभा का आयोजन करके आप हम दोनों के बीच प्रतियोगिता का आयोजन कीजिए ।"

इस बार जो खड्ग-युद्ध हुआ, उसमें जयवर्मा ने उग्रसेन को बहुत ही आसानी से पराजित किया । उसके कण्ठपर अपनी तलवार टिकाते हुए जयवर्मा ने आदेश दिया, "सुनो, मैं मालवदेश का भावी राजा तुम्हें आदेश दे रहा हूँ, कि तुम अपने गिरोह के साथ इस राज्य को छोड़कर कहीं और चले जाओ ।"

प्राणभय से डरते हुए उग्रसेन ने हाथ जोड़कर बिनती की, "मैं आप के आदेश का ज़रूर पालन करूँगा । आज ही मैं अपने अनुचरों के साथ यह राज्य छोड़कर कहीं और चला जाऊँगा । महाराज, अपने इस वचन का मैं निश्चय ही पालन करूँगा ।" यह कहकर डाकुओं का नेता उग्रसेन वहाँ से चला गया ।

इस घटना से राजा माधववर्मा प्रसन्न हुआ और उसने बड़ी धूमधाम से रत्नमाला का विवाह जयवर्मा के साथ करा दिया । साथ ही उस राज्य के राजा के रूप में जयवर्मा का राज्याभिषेक भी कराया गया ।

इसके बाद एक दिन माधववर्मा ने अपने दामाद से पूछा, "जयवर्मा, तुम जब डाकुओं के नेता कि खोज में चले गये थे, तब तुम्हारी रक्षा के हेतु मैं ने कुछ गुप्तचर तुम्हारे पीछे भेज दिये थे । वहाँ तो तुम उग्रसेन के हाथों हार गये थे, लेकिन राजसभा के सामने तुमने कुछ ही क्षणों में उसे जीत लिया; यह कैसे संभव हुआ?"

इसपर मन्दहास करते हुए जयवर्मा ने कहा, "बिना न्याय-निर्णायकों के कोई प्रतियोगिता होती है, तो वह अर्थहीन ही होती है । इसलिए मैंने जंगल में उसे पराजित करने का प्रयत्न ही नहीं किया । मैं चाहता तो उसे पराजित करना मेरे बाएँ हाथ का खेल था । यह पहला कारण है ।"

"तो फिर दूसरा कारण क्या है?" आश्चर्य से माधववर्मा ने पूछा ।

"यदि जंगल में मैं ने उसे पराजित किया होता, तो उग्रसेन आप के समक्ष हाज़िर न होता । कोई न कोई बहाना बनाकर वह आपसे मिलना टाल देता राज्य के किसी और प्रान्त में जाकर वह वहाँ के लोगों को भी लूट लेता । इसी विचार से मैं ने उसे राज्य और राजकुमारी का प्रलोभन देकर यहाँ उपस्थित होने का मौक़ा दिया । और यों मेरी युक्ति सफल हुई ।" जयवर्मा ने उत्तर दिया ।

यह सब सुनकर माधववर्मा इस विचार से आनन्दित हुआ कि अपने जामाता न केवल विद्यावेत्ता व पराक्रमी है, बल्कि अत्यंत विवेकशील भी हैं ।

शिशुपाल का एक मित्र था, जिसका नाम था साल्व । जब श्रीकृष्ण रुक्मिणी को उठा ले गये थे, उस समय अन्य योद्धाओं के साथ साल्व भी श्रीकृष्ण के हाथों पराजित हुआ था । इस कारण गुस्से में आकर उसने प्रतिज्ञा की थी – "मैं इस संसार के समस्त यादवों का सर्वनाश कर डालूँगा ।" अपनी इस प्रतिज्ञा की पूर्ति के लिए साल्व ने शिवजी के प्रति घोर तपस्या की और उनके प्रत्यक्ष होने पर उनसे एक अपूर्व विमान की माँग की । शिवजी ने विश्वकर्मा को आज्ञा दी कि वह एक विमान का निर्माण कर उसे साल्व को सौंप दे । विश्वकर्मा ने सौभ नामका एक लोहे का काला विमान बनाया और उसे साल्व को दे दिया । उस विमान की क्षमताएँ अद्‌भुत थीं । बड़े बड़े पेड़ वह उठाकर ले जा सकता था । उसमें कई प्रकार के अस्त्र-शस्त्र थे । किसी समृद्ध नगरी का नाश करने की सामग्री उसमें विद्यमान थी । ऐसा अद्‌भुत विमान पाकर साल्व बहुत प्रसन्न हुआ । साल्व उस पर सवार हो द्वारका पर हमला कर बैठा । उसकी सेनाओं ने द्वारका को घेर लिया ।

साल्व ने अपने विमान से द्वारका पर पत्थर, पेड़, अस्त्र-शस्त्र आदि बरसा कर हाहाकार कर दिया । उसकी सेनाएँ नगर के महलों व उद्यानों का ध्वंस करने लगीं ।द्वारका ने नगरवासी भयभीत होकर इधर-उधर भाग-दौड़ करने लगे । उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि इस स्थिति में अब क्या करें? स्त्रियाँ और बालकों की स्थिति तो बड़ी दयनीय हो गई । यह सारा कांड देख

२९. सुदामा की कहानी

प्रद्युम्न ने सारी यादव-सेनाओं के साथ साल्व पर आक्रमण किया । उसके साथ सात्यकी, चारुदेष्ण, सांब, अक्रूर, कृतवर्मा जैसे वीर योद्धा थे । उस समय श्रीकृष्ण पांडवों के यहाँ थे ।

साल्व तथा यादवों की सेनाओं के बीच सत्ताईस दिनों तक भयानक युद्ध चला । तब तक श्रीकृष्ण द्वारका लौट आये । रास्ते में ही उन्होंने उस युद्ध की तीव्रता को जान लिया और अपने रथ को सीधे साल्व की ओर बढ़ाया । दोनों के बीच तुमुल युद्ध हुआ । श्रीकृष्ण ने सौभ विमान का ध्वंस किया और उसे समुद्र में गिरा दिया । शिवजी से पाये अपने विमान का यों नाश होते देख साल्व बहुत दुखी हुआ । वह बड़ी हिम्मत से श्रीकृष्ण के साथ युद्ध के लिए संन्नद्ध हो गया । फिर श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से साल्व का संहार किया ।

साल्व की मृत्यु देख उसका मित्र दंतवक्तृ एक गदा लेकर अकेला ही श्रीकृष्ण से लड़नेके लिए आ गया । वैसे श्रीकृष्ण दंतवक्तृ के ममेरे भाई थे । उन्होंने भी अपने हाथ में गदा ली और दंतवक्तृ के साथ घनघोर युद्ध किया । श्रीकृष्ण ने अपनी गदा से उसके वक्ष पर प्रहार करके उसको मार डाला । इस प्रकार साल्व का शुरू किया युद्ध-कांड समाप्त हुआ ।

श्रीकृष्ण के एक बालसखा थे सुदामा । बचपन में दोनों ने एक ही गुरु के पास शिक्षा पाई थी । गुरु-गृह में रहते हुए दोनों एक साथ अध्ययन करते थे । गुरु-पत्नि ने कुछ काम करने के लिए कहा तो दोनों के मन में एक-सी श्रद्धा और भक्ति थी । सुदामा ने विवाह करके गृहस्थाश्रम स्वीकार किया था, लेकिन वह दरिद्र से पीडित था । सुदामा की अपेक्षा उसकी पत्नी दरिद्रता की पीड़ा का अधिक अनुभव करती थी । कभी घर में भोजन के लिए कुछ न होता तो भूखे पेट सोना पड़ता था । फटे-पुराने वस्त्र ही पहन लेते थे । बच्चों की बड़ी दुर्दशा थी । दरिद्रता के मारे परिवार को जीना मुश्किल हो रहा था । सुदामा की पत्नि जीवन से ऊब गई थी । इस लिए एक दिन उसने अपने पति से कहा-"श्रीकृष्ण तो आपके बाल-मित्र हैं न? सुना है कि वे ब्राह्मणों को अपार दान देते हैं ।

वे उन सब की सहायता करते हैं, जो उनकी शरण में जाते हैं । आप तो उनके मित्र हैं, तिस पर भी गृहस्थी के भार से दबे हैं, क्या वे आपकी सहायता न करेंगे? मेरी मानिए तो, एक बार अपने बचपन के साथी के दर्शनके लिए द्वारका जाइए और अपनी दरिद्रता की कहानी उनको सुनाइए । वे आपकी अवश्य मदद करेंगे । श्रीकृष्ण की कृपा हुई तो अपने दुर्दिन यों समाप्त हो जाएँगे ।"

सहायता माँगने के बहाने श्रीकृष्ण के दर्शन करने की इच्छा सुदामा के मन में भी थी । उसे विश्वास था कि श्रीकृष्ण के दर्शन से अवश्य लाभ ही होगा । यों सोचकर उसने पत्नी से कहा—"मैं श्रीकृष्ण के दर्शन करने अवश्य जाऊँगा । लेकिन खाली हाथ कैसे जाऊँ? उनके लिए उपहार ले जाना उचित होगा । क्या इसके योग्य कोई उपयुक्त वस्तु अपने घर में है?"

सुदामा की पत्नी अड़ोस-पड़ोस के घरों में जाकर चार मुठ्ठियाँ चिउड़े माँग लाई । उसे एक छोटे कपड़े में बाँध कर वह पोटली सुदामा के हाथ धर दी । सुदामा चिउड़े की पोटली के साथ घर से निकल पड़ा और द्वारका पहुँच कर श्रीकृष्ण की खोज में भटकने लगा ।

पलंग पर विश्राम करनेवाले श्रीकृष्ण ने दूर से ही सुदामा को देखा और उठ कर समीप आये । प्रेमपूर्वक आलिंगन किया और पलंग पर अपने पास बैठा लिया । उन्होंने स्वयं सुदामा के पैर धोये । उस जल को अपने सिर

पर छिड़क कर फिर सुदामा के शरीर पर चंदन मल दिया । उसके गले में पुष्पमाला पहना दी । सुदामा के शरीर पर धूल जमी थी, उसके वस्त्र फटे-पुराने थे । ऐसे व्यक्ति का अपने पति के द्वारा हुआ आदर-सत्कार देख कर रुक्मिणी भी चँवर झलने लगी । सुदामा के प्रति श्रीकृष्ण का प्रेम देख सभी उपस्थित लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ ।

सुदामा का समुचित आदरातिथ्य करने के बाद श्रीकृष्ण और सुदामा दोनों अपने बचपन के गुरुकुल के दिन याद करने लगे ।

एक दिन गुरु-पत्नी ने उन्हें समिधाएँ जुटाने के लिए भेजा था । इस काम के लिए वे

एक विशाल वन में पहुँचे । इतने में जोरदार आँधी आई और मूसलाधार वर्षा प्रारंभ हुई । आसमान में बिजलियाँ कड़कने लगीं । बादल गरजने लगे । इतने में सूर्यास्त हुआ । बारिश में दोनों पूरी तरह भीग गये । ऊबड़-खाबड़ प्रदेश में रास्ता कुछ नज़र नहीं आ रहा था । दोनों एक-दूसरे के हाथ पकड़ कर रात भर जंगल में भटकते रहे । दूसरे दिन की सुबह हुई । गुरु सांदीपनी को जब मालूम हुआ कि उनके शिष्य जंगल में भटक गये हैं, तो वे उनकी खोज में चल पड़े । मिलने पर उनकी अवस्था देख बहुत दुखी हुए । उन्होंने कहा—"तुम दोनों ने हमारे लिए कितने परिश्रम उठाये! तुम्हारा प्रेम और भक्ति देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई । तुम्हारे सभी मनोरथ निश्चय ही पूरे होंगे । आदर्श शिष्य अपने गुरु के लिए इस से बढ़ कर और क्या कर सकते हैं?" फिर सांदीपनी ने दोनों को बड़े प्यार से आशीर्वाद दिये । इस घटना को याद कर श्रीकृष्ण ने सुदामा से पूछा—"क्या तुम्हें यह सब याद है?"

"गुरुकुल के अपने मित्र की शुभेच्छाएँ हों, तो मेरे समान साधारण व्यक्ति की कौन इच्छा पूरी न होगी?" सुदामा ने कहा ।

इस पर श्रीकृष्ण ने हँस कर पूछा—"ज़रा यह तो बताइए कि आप अपने घर से मेरे लिए क्या लाये हैं?"

सुदामा कुछ झिझक गये । श्रीकृष्ण को अपने साथ लाये चिउड़े देने में कुछ लज्जा महसूस हुई । इस पर श्रीकृष्ण ने ज़बर्दस्ती सुदामा के हाथ की पोटली अपने हाथ में लेकर पूछा—"इसके अंदर भला क्या है?" इसके साथ उन्होंने पोटली खोल दी और प्रेम से कहा—"वाह, चिउड़े हैं? मुझे चिउड़े बहुत प्रिय हैं ।" श्रीकृष्ण ने बड़े चाव से एक मुठ्ठी भर चिउड़े खा लिये और दूसरी मुठ्ठी भर हाथ में ले लिये ।

रुक्मिणी ने श्रीकृष्ण का हाथ थमानते हुए कहा—"बस, अब तक आपने जितना खाया पर्याप्त है!"

उस दिन सुदामा ने श्रीकृष्ण के घर में ही स्नान-भोजन करके विश्राम किया । उसे लगा, सचमुच वह स्वर्गलोक में पहुँच गया है ।

दूसरे दिन जब सुदामा अपने गाँव जाने

निकला, तब श्रीकृष्ण थोड़ी दूर तक उसके साथ हो लिये और फिर उसे विदा किया। श्रीकृष्ण ने सुदामा को धन, अलंकार आदि कुछ नहीं दिया। सुदामा मन-ही-मन सोचने लगा—"श्रीकृष्ण तो महाराजा ठहरे, मैं एक ग़रीब कंगाल! ब्राह्मण मान कर उन्होंने आदर के साथ मुझे आलिंगन दिया। अपने छोटे भाई के समान मेरे साथ व्यवहार किया। अपनी शय्या पर पास में मुझे बिठाया। अपनी पत्नी के हाथों चँवर झलवाया। उन्होंने शायद यह सोचकर मुझे धन नहीं दिया कि धन प्राप्त होने से मेरे मन में गर्व पैदा होगा।"

पर सुदामा जब अपने गाँव पहुँचा—तो क्या देखता है! आँखों को चौंधियानेवाले महल उसने अपने सामने देखे। उद्यान, वन और सरोवर उसने देखे। उनमें तरह तरह के पक्षी, कमल आदि फूल दिखाई दिये। भवन में दास-दासियों की चहल-पहल थी।

वह विस्मय के साथ सोचने लगा—"यह किसका घर होगा? यह मेरा घर तो है नहीं! यह सब कैसा परिवर्तन है?" इतने में देवताओं के समान नर-नारियाँ विविध वाद्यों को बजाती उपस्थित हुईं और बड़े आदर-सत्कार के साथ उसे भवन में ले गईं।

सुदामा की पत्नी लक्ष्मी ने प्रवेश करके अपने पति-देव का दर्शन किया, आनन्दाश्रु भरे नयनों को बंद कर प्रणाम किया और मन-ही-मन उनको आलिंगन दिया।

यह सब कुछ देख सुदामा अपने मन में सोचने लगा—यह सारा ऐश्वर्य मुझे श्रीकृष्ण के दर्शन के कारण ही प्राप्त हुआ है। और
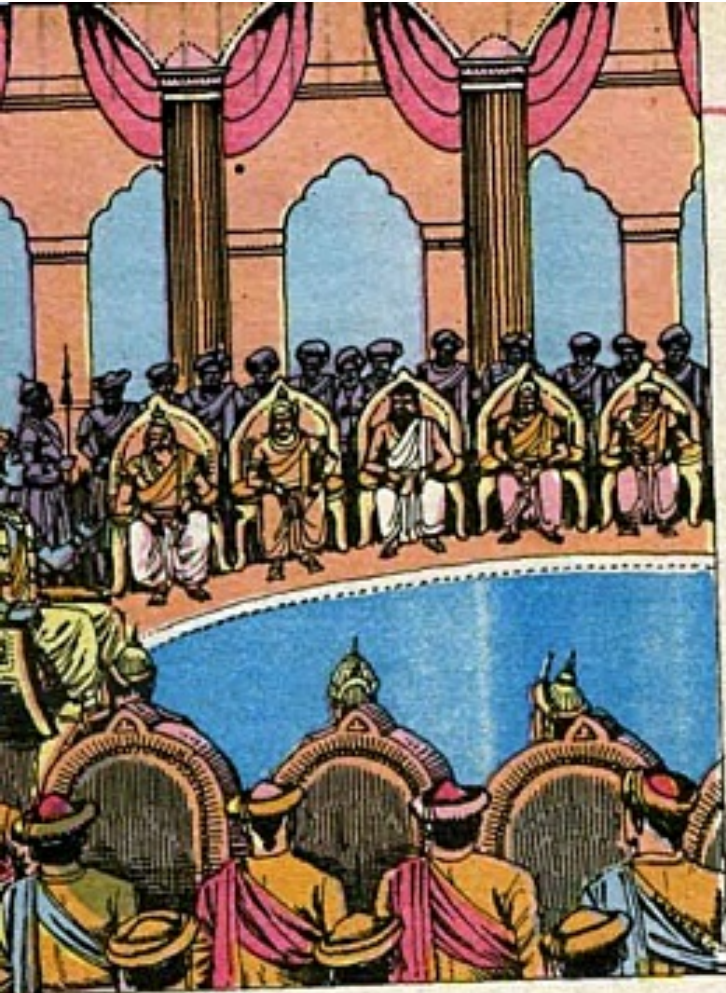
दूसरा क्या कारण हो सकता है? मित्र हो तो ऐसा हो! मुझ से एक नगण्य वस्तु प्राप्त कर उसको बहुत महत्त्वपूर्ण माना । और उन्होंने जो अपार उपकार किया, उसे वे अल्प मानते हैं ।''

अब सुदामा अपनी पत्नी व बच्चों के साथ बड़े वैभवपूर्वक जीवन-यापन करने लगा ।

एक बार संपूर्ण सूर्यग्रहण का दिन आया । सारे यादवों ने द्वारका की रक्षा का ज़िम्मेदारी अनिरुद्ध पर सौंपी और कुरुक्षेत्र के लिए चल पड़े । वहाँ पर श्रीकृष्ण के सभी पुराने रिश्तेदारों से मुलाक़ात हुई । नंद और यशोदा आए, कुंती भी आ गई । भीष्म, द्रोण, धृतराष्ट्र, संजय, विदुर, कृपाचार्य, दुर्योधन इत्यादि के साथ गांधारी, पांडव, उनकी पत्नियाँ आदि लोग बहुत समय के बाद मिले । सब ने परस्पर वार्तालाप किया ।

उस समय पांडवों की पत्नी द्रौपदी ने श्रीकृष्ण की आठ पत्नियों से पूछा–''मुझे बताएँगी श्रीकृष्ण के साथ तुम्हारा विवाह कैसे हुआ?''

रुक्मिणी ने अपने विवाह का वृत्तांत बताया–''जरासंध आदि ने निर्णय किया था कि मेरा विवाह शिशुपाल के साथ हो । पर श्रीकृष्ण ने आकर सब को पराजित किया और मुझे उठा ले आए । फिर मुझसे विवाह किया ।''

''मेरे पिता सत्रजित ने मेरा विवाह किसी और के साथ करने का संकल्प किया था । लेकिन इस बीच मेरे चाचा का देहान्त हुआ । मेरे पिताजी ने अफ़वाह उड़ाई कि यह काम श्रीकृष्ण का है । इस पर श्रीकृष्ण उस अफ़वाह को झूठ साबित करने के लिए निकल पड़े और मेरे चाचा का संहार करनेवाले सिंह का वध करके स्यमंतक मणि को प्राप्त किया और जांबवान को पराजित किया । फिर उन्होंने उस मणि को मेरे पिताजी को सौंप दिया और मेरे साथ विवाह किया ।'' सत्यभामा ने अपनी कहानी सुनाई ।

जांबवती ने कहा–''मेरे पिता है जांबवान । पच्चीस दिन तक श्रीकृष्ण के साथ लड़ने के बाद वे समझ गये कि उस युग के रामचन्द्र ने ही श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लिया है । फिर उन्होंने श्रीकृष्ण के चरण धोये । तब सिंह का संहार करके लाये गये
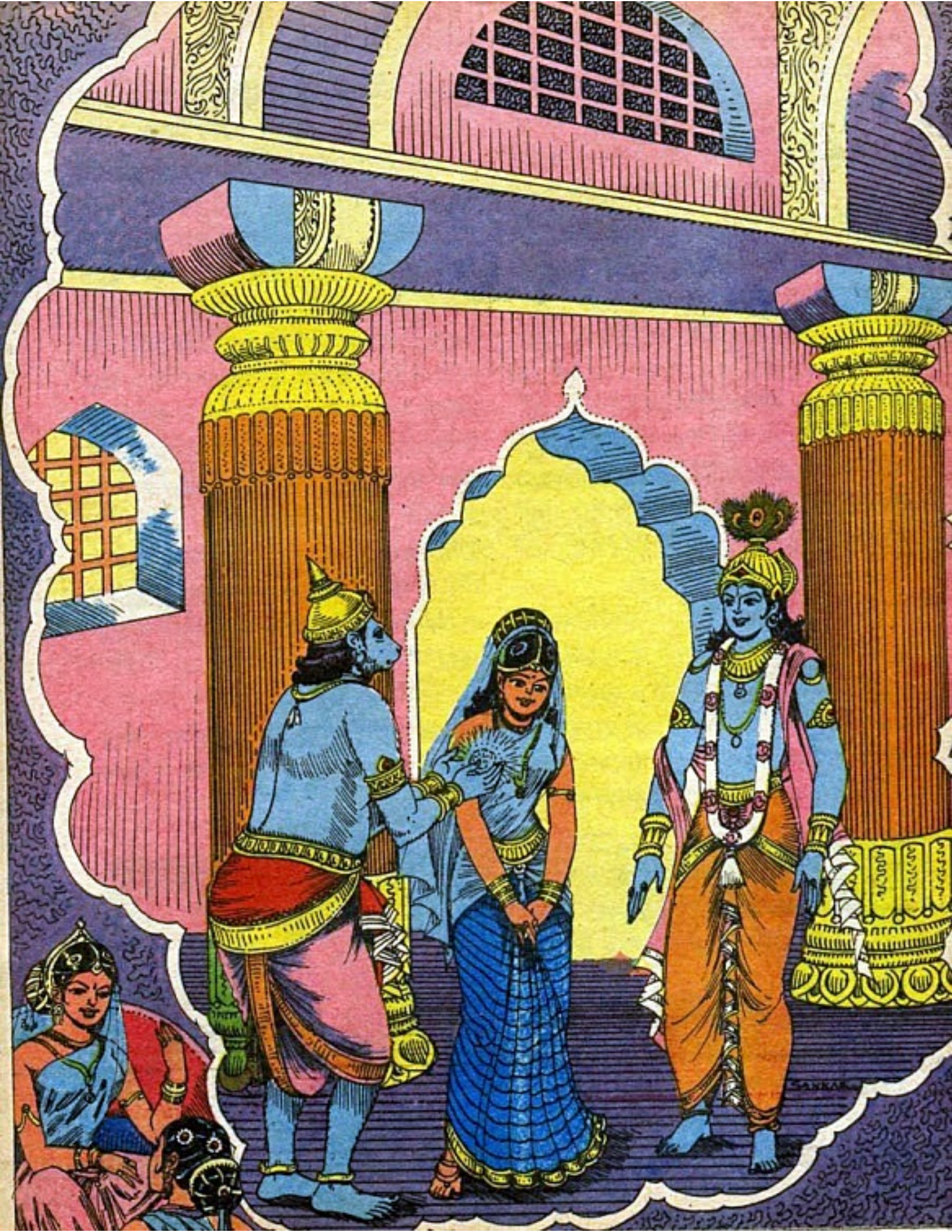
मणि के साथ मुझे भी श्रीकृष्ण को सौंप दिया ।''

''श्रीकृष्ण को जब मालूम हुआ कि मैंने उनको पाने के लिए तपस्या की है, तो वे अर्जुन को साथ लेकर आए और उन्होंने मेरे साथ विवाह कर लिया ।'' कालिन्दी ने अपनी विवाह-कथा सुना दी ।

भद्रा ने कहा—''मेरे स्वयंवर के समय अनेक राजा आये थे । श्रीकृष्ण ने सब को पराजित कर मेरे साथ विवाह कर लिया ।''

''मेरे पिता ने शर्त रखी थी कि जो सात साँड़ों को हराएगा, उसी के साथ मेरा विवाह करेंगे । श्रीकृष्ण ने मेमनों भाँति सारे साँड़ों को हराया और मेरे हृदय को जीत लिया ।'' नीला ने अपनी कथा सुनायी ।

मित्रविंदाने अपनी विवाह-कथा सुनाई—''श्रीकृष्ण मेरे मामा के पुत्र हैं, मेरे पिता को जब मालूम हुआ कि मैं श्रीकृष्ण को मन से चाहती हूँ, तो उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से मेरा विवाह उनके साथ करा दिया ।''

अंत में लक्षणा ने अपने विवाह का वृत्तान्त सुनाया—''आपके पिता के समान मेरे पिता ने भी एक मत्स्य-यंत्र का प्रबंध किया था । उन्होंने घोषणा की थी जो व्यक्ति इस यंत्र को छेद देगा, उसके साथ मेरा विवाह किया जाएगा । मेरे पिता का यंत्र अंदर से दिखाई न देता था । केवल जल में उसका प्रति बिम्ब दीखता था, और वह भी कुछ अस्पष्ट रूप में! उसको गिराने के लिए मेरे पिता ने जिस धनुष्य का उपयोग किया था, उसको बहुतेरे राजा चढ़ा न सके । जरासंध, शिशुपाल, भीम, दुर्योधन, कर्ण ने धनुष्य पर बाण तो चढ़ाया, लेकिन उनको जल में प्रतिबिंब दिखाई नहीं दिया । अर्जुन ने प्रतिबिंब को देखा, परंतु यंत्र को भेद न पाये । अंत में केवल श्रीकृष्ण ने धनुष्य चढ़ाकर मत्स्य-यंत्र को भेद डाला और मुझसे विवाह किया ।''

द्रौपदी और वहाँ पर उपस्थित सभी नारियाँ इन कथाओं को सुन कर अत्यन्त आनंदित हुईं ।

पं. शिवशर्मा एक गुरुकुल का संचालन करते थे। एक दिन तीन युवक एक साथ आकर उनके गुरुकुल में भर्ती हुए। दो महीने अध्ययन होने के बाद एक बार शिवशर्मा ने तीनों से कहा—"देखो, तुम लोगों की प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण हो गई है। आज से तुम लोगों की विशेष शिक्षा शुरू होगी। तुम लोग अपनी-अपनी अभिरुचि बताओ, तो उसके अनुसार मैं तुम्हें पढ़ाऊँगा।"

सब से पहले सुनन्द ने गुरु से कहा—"मैं चाहता हूँ कि मैं राज-दरबार में नौकरी करूँ।"

दूसरे युवक भूपति ने अपनी इच्छा प्रदर्शित की—"मुझे वैद्य बनने की चाह है। आयुर्वेद का अध्ययन करके मैं एक चिकित्सक बनना चाहता हूँ। मेरे माता-पिता की भी यही इच्छा है।"

अंत में माधव ने अपने मन की बात कह दी। उसने अपनी ज़िम्मेदारी आचार्य पर ही छोड़ते हुए कहा—"किसी विशेष विद्या का अध्ययन करने की मेरी इच्छा नहीं है। आप ही मेरे बारे में निर्णय कीजिएगा।"

आचार्य शिवशर्मा ने माधव को सुझाया—"तुम यथासंभव सभी विद्याओं को थोड़ा थोड़ा पढ़ने जाओ। जब तुमको किसी एक विषय में अभिरुचि पैदा हो जाएगी तब मुझे बताना।" इसके बाद आचार्य ने सुनन्द को गणितशास्त्र तथा अर्थशास्त्र और भूपति को आयुर्वेद पढ़ाना शुरू किया।

यों कुछ महीने बीत गये। एक दिन शिवशर्मा अपनी पत्नी से बातचीत कर रहे थे। कुछ चिंता के साथ उन्होंने कहा—"इधर कुछ महीने पहले जो तीन युवक हमारे गुरुकुल में प्रविष्ट हुए, उनमें सुनन्द तो बड़ा तेज़ दीखता है, भूपति

तेजस मेहता

बड़े परिश्रम के साथ अपना अध्ययन कर रहा है। लेकिन माधव के बारे में कुछ पता नहीं चलता। सुना है कि वह गुरुकुल के बाहर यहाँ-वहाँ भटकता रहता है।

इतने में आचार्य के एक प्रिय शिष्य ने वहाँ आकर समाचार दिया—"गुरुजी, माधव के बारे में कुछ बातों का पता चला है। वह अक्सर पासवाले जंगल में चरवाहों के साथ अपना समय काटता है। आप चाहें तो कल जाकर अपनी आँखों से देख लीजिएगा।"

अगले दिन आचार्य शिवशर्मा माधव की खोज में जंगल की ओर चल पड़े। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर उन्हें कहीं से मुरली की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ी। शिवशर्मा उस ओर आगे बढ़े और एक अद्‌भुत दृश्य देखा।
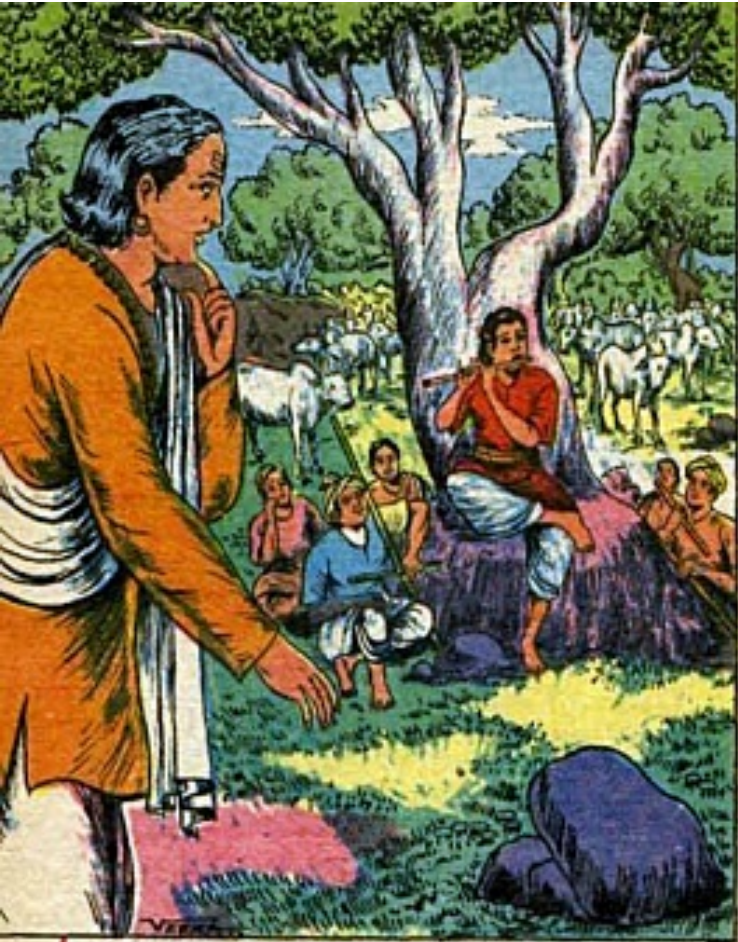
एक पेड़ की छाँव में बैठ कर माधव बड़े सुरीले ढंग से मुरली बजा रहा था। उसकी चारों ओर चरवाहे स्तब्ध बैठे संगीत का आस्वाद ले रहे थे। शिवशर्मा माधव की मुरली के संगीत पर एकदम मुग्ध हो गए।

संगीत के समाप्त होने पर आचार्य माधव के पास पहुँचे और कहा—"मुझे मालूम नहीं था कि तुम इतना अच्छा मुरली-वादन करते हो। तुमने इसके बारेमें मुझे बताया नहीं। क्या बात है?"

आचार्य को प्रणाम करके माधव ने कहा—"क्षमा कीजिए गुरुदेव, मैंने हाल ही में इन चरवाहों से मुरली बजाना सीख लिया है। मेरी यह कला कुछ विशेष महत्त्वपूर्ण तो नहीं कही जा सकती।"

शिवशर्मा ने माधव की पीठ पर हाथ रख कर कहा—"यह तो तुम्हारा सहज पांडित्य है। तुम इस कला में खूब प्रगति करो। तुम्हें मेरे आशीर्वाद हैं।"

गुरुकुल के अध्ययन की समाप्ति पर सुनन्द की राज-दरबार में एक ऊँचे पद पर नियुक्ति हुई। भूपति ने राजधानी में ही एक बहुत बड़ा चिकित्सालय खोला। माधव ने वेणु-वादन करते हुए अनेक देशों का भ्रमण किया और अच्छा नाम कमाया।

कुछ साल बीत गये। एक बार आचार्य शिवशर्मा अपने किसी काम से राजधानी गये। अपने शिष्यों को देखने की उनको इच्छा हुई। पहले वे भूपति के पास गये।

कुछ बातचीत के बाद भूपति ने अपना

रिक्त चिकित्सालय आचार्य को दिखाया और कहा–"गुरुजी, इस आयुर्वेद के रहस्यों का मुझे कुछ ठीक पता नहीं चल रहा है। बड़े परिश्रम से मैंने अध्ययन किया, उससे कोई फ़ायदा होता हुआ दिखाई नहीं दे रहा है।"

शिवशर्मा ने उसको सान्त्वना दी और उसे अपने साथ लेकर वे सुनन्द के पास पहुँचे। सुनन्द ने अपने घर में गुरुजी का अच्छा आतिथ्य किया। सुनन्द अच्छे ओहदे पर था, रूपये-पैसे की भी कमी न थी। पर आचार्य को लगा कि सुनन्द को अपने पद से पूर्ण संतोष नहीं है।

वार्तालाप करते हुए सुनन्द ने कहा–"आचार्य, कल राजसभा में माधव के वेणु-वादन का कार्यक्रम है!"

दूसरे दिन तीनों राजसभा में पहुँचे माधव अपने आसपास के परिसर को भूल कर मुरली बजाने में तन्मय हो गया। सभी श्रोता भी बड़ी तन्मयता से संगीत का रसास्वादन कर रहे थे। अंत में सब ने तालियाँ बजाकर माधव की वादन कला का अभिनंदन किया।

महाराजा स्वयं सिंहासन से नीचे उतरकर आये और माधव की पीठ पर हाथ रखकर प्रशंसा करते हुए बोले–"वाह, तुम्हारा वेणु-वादन तो बड़ा ही अद्‌भुत रहा। तुमने जिन रागों को आलापा, उनमें सजीवता स्पंदित हो रही थी। तुम हमारे दरबार में वेणु-वादन के विद्वान बनकर रहो।" कहते हुए राजा ने एक थाली भर स्वर्ण-मुद्राएँ माधव को भेंट की।

माधव ने नम्रतापूर्वक राजा को प्रणाम

किया और कहा—"महाराज, देशाटन करनेवाले मुझ जैसे यायावर को इस पद से क्या करना है? आप महान् कला-प्रेमी हैं। आप आदेश दें तो मैं जहाँ कहीं हूँ, वहाँ से दौड़ कर आपके पास पहुँच जाऊँगा।" माधव ने राजा से मिली स्वर्ण-मुद्राओं को अन्न-दान करनेवाली एक धर्मशाला को दान दिया।

उस दिन रात को जब तीनों शिष्य गुरु के समीप बैठ गये, तब सुनन्द ने आचार्य से पूछा—"गुरुजी, मैंने जो कुछ करने का संकल्प किया था, उसे तो साध लिया। फिर भी मुझे जीवन में संतोष नहीं प्राप्त हो रहा है। इसका क्या कारण है—समझ में नहीं आता।"

आचार्य शिवशर्मा ने उत्तर में कहा—"तुमने बड़ी सावधानी से विद्या अवश्य प्राप्त की। लेकिन प्रारंभ से ही तुम्हारी दृष्टि ओहदे पर रही। इस कारण ज्ञान से प्राप्त होनेवाला संतोष तुम्हें नहीं मिला।"

इसके बाद शिवशर्मा ने भूपति की ओर मुड़कर कहा—"तुमने धनार्जन करना ही अपने जीवन का प्रमुख उद्देश्य बनाया और अपनी अभिरुचि के प्रतिकूल चिकित्सक का पेशा अपनाया और नुकसान उठाया। वास्तव में तुम दोनों मृग-मरीचिका के पीछे दौड़ते रहे। धन, यश और पद जैसी चीज़ें हमारे प्रयत्न करने पर भले ही प्राप्त हों, कभी संतोष नहीं देती।" कह कर गुरुजी क्षण भर रुके, और फिर बोले—"माधव को मालूम था कि संगीत से ओहदा तथा संपत्ति नहीं प्राप्त होगी, उसने सहजता से प्राप्त वेणु-वादन की कला का अध्ययन किया। और उस में विशेष सफलता प्राप्त की। उसकी यह सहज विद्या उसको जीवन पर्यंत संतोष तथा आनन्द देती रहेगी।"

अब भूपति और सुनंद ने अच्छी तरह समझ लिया कि वे केवल ओहदा और संपत्ति के पीछे पड़कर अपनी सहज प्रवृत्ति के अनुसार विद्या प्राप्त करनेका उन्होंने प्रयत्न नहीं किया और परिणामतः अपने जीवन में आनंद और संतोष से वंचित रह गये।

न्याय की देवी

चीन देश में चाँग नाम का एक युवक रहा करता था । वह अत्यंत ग़रीब था । बचपन में ही उसके माँ-बाप गुज़र गये थे । इस लिए चाँग छोटा-मोटा काम करके ज्यों-त्यों अपना गुज़ारा करता था । पिता की संपत्ति के नाम पर चाँग के पास केवल एक छोटा-सा घर था, जिसमें वह रहता था ।

चाँग के घर के पास एक व्यापारी रहा करता था । अनाथ चाँग को नोकरी देने के बहाने वह व्यापारी चाँग का मकान तथा उसके साथ लगी खाली ज़मीन पर कब्जा जमाना चाहता था । पर चाँग व्यापारी के मन की बात को अच्छी तरह जानता था, इस लिए व्यापारी के पास नोकरी करने से उसने साफ़ इन्कार किया ।

चाँग की कुलदेवी थी 'टोंगो' । वही चीन के निवासियों की न्याय-देवी भी थी । अपने काम पर जाने से पहले चाँग रोज़ श्रध्दा व भक्ति के साथ 'टोंगो' की प्रतिमा को प्रणाम करता ।

कुछ ही समय में चाँगने बहुत-सा धन जमा किया । उसमें उत्साह भरपूर था और वह हमेशा प्रसन्न रहता था, यह देख व्यापारी उससे जलने लगा । व्यापारी के मन में इच्छा पैदा हुई कि चाँग के उत्साह व आनंद का कारण जान लें । एक दिन आधी रात के समय वह चाँग के मकान के पास पहुँचा और खिड़की में से झाँक कर देखा । देख कर उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा ।

चाँग के पीछे एक बहुत बड़ा बक्सा था । चाँग सोने की मुद्राएँ गिन-गिन कर उसमें डाल रहा था । इसके बाद उसने अपनी ज़ेब से कुछ और सिक्के निकाले और उन्हें भी बक्से में रख दिया । उस बक्से को ज़मीन के अन्दर रख कर लकड़ी एक तख्ते से उसे ढ़क दिया । फिर उस पर 'टोंगो' की प्रतिमा रख

एक चीनी लोककथा

कर उसकी पूजा की और पास में बिछाए बिस्तर पर लेट गया ।

यह सब देख कर व्यापारी अपने घर लौटा । उसे रात भर नींद नहीं आई । अपने मन में उसने सोचा -- "इस कम्बख्त लड़के ने कितना सोना जमा कर रखा है! किसी तरह उसे हड़प लेना चाहिए ।"

अगले दिन जब चाँग अपने काम पर गया, तब व्यापारी ने उसके घर में प्रवेश किया । टोंगो की प्रतिमा को उठाकर एक तरफ़ रख दिया और लकड़ी का तख्ता भी उठाया । गड्ढे के अंदरवाला बक्सा खोल कर सोने की मुद्राएँ निकालीं, उन्हें अपनी थैली में भर लिया । फिर बक्सा बंद करके ऊपर तख्ता रख दिया और उस पर प्रतिमा को पूर्ववत् रख कर वह अपने घर चल दिया ।

रात को चाँग घर आया और उसने देखा कि अपना सब सोना गायब है । चाँग को बड़ी चिंता हुई । खूब सोच-विचार के बाद उसको लगा कि चोर कोई पराया नहीं है, कोई जाना-पहचाना ही होगा वह!

सुबह होते ही चाँग न्यायाधिकारी के पास पहुँचा और उनको सारा वृत्तान्त कथन किया । उसने न्यायाधिकारी को प्रार्थना की कि किसी प्रकार वे चोर का पता लगा कर उसकी संपत्ति उसे प्राप्त करा देने की कोशिश करें ।

न्यायाधिकारी ने चाँग की बातें सुन कर उसे रवाना किया । देर तक वह सोचता रहा, तब उसको व्यापारी के बारे में शक हुआ । चूँकि चोर को पकड़ने की ज़िम्मेदारी उसी की थी, उसने रात के समय चाँग के घर पर पहरा देने के लिए गुप्त रूप से एक सेवक की नियुक्ति की ।

दो दिन हुए, चाँग के मकान की तरफ एक आदमी भी नहीं फटका । लेकिन तीसरे दिन रात को व्यापारी चाँग के मकान के पास पहुँचा और खिड़की में से अंदर झाँकने लगा । इसे पहरेदार ने देखा और दौड़ कर न्यायाधिकारी को ख़बर दी । न्यायाधिकारी का व्यापारी पर शक था ही, अब वह साबित हुआ ।

अब व्यापारी को चोर के रूप में पकड़ना ही बाकी था । इसके लिए न्यायाधिकारी ने एक उपाय सोचा और उसे चाँग को बता दिया ।

चौथे दिन व्यापारी ने आकर चाँग के मकान की खिड़की में से भीतर झाँका, तो उसे एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया ।

खिड़की की ओर पीठ करके एक स्त्री खड़ी थी, चाँग घुटने टेक कर उसे प्रणाम कर रहा था । वह स्त्री चाँग से कह रही थी – "वत्स, मेरे प्रति तुम्हारी अनुपम भक्ति को मैं जानती हूँ । पीढ़ियों से तुम्हारे वंश के लोग मेरी पूजा-अर्चना करते आ रहे हैं । तुम्हारे प्रति घोर अन्याय हो गया है । मैं जानती हूँ तुम्हारी संपत्ति की चोरी किसने की है । उसने तुम्हारी जो एक हज़ार स्वर्ण-मुद्राएँ चुरा लीं है, वे सब मैं तुम्हें वापस दिलाऊँगी । तुम चिंता मत करो ।"

ये सब बातें सुन कर व्यापारी को बड़ा आश्चर्य हुआ । वह मन-ही-मन कहने लगा – "एक हज़ार स्वर्ण-मुद्राएँ? उस बक्से में तो सौ ही स्वर्ण-मुद्राएँ थीं । मैंने अच्छी तरह गिन तो लीं थीं न?" यों सोचते हुए वह दौड़ा दौड़ा अपने घर गया और चोरी कर लाईं मुद्राओं को फिर से गिनने लगा ।

जब व्यापारी स्वर्ण-मुद्राओं को गिन रहा था, तब न्यायाधिकारी दस सिपाहियों के साथ वहाँ पहुँचा । उसने व्यापारी को बन्दी बनाया । व्यापारी ने मान लिया कि उसने चोरी की है । फिर न्यायाधिकारी ने व्यापारी को तीन महीनों के कारावास की सज़ा सुनाई और चाँग को अपनी सारी स्वर्ण-मुद्राएँ वापस दिलाईं ।

उन्हें पाकर चाँग की खुशी का ठिकाना न रहा । उसने मुद्रओं को भली भाँति गिन लिया ।

न्यायाधिकारी के इस कार्य से उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गई । चीन में लोगों की यह धारणा है कि 'टोंगो' देवी न्यायाधिकारियों की प्रत्यक्ष रूप से सहायता करती है । पर ऐसी न्याय की देवी को आज तक किसी ने कभी देखा नहीं है ।

जनता में यह दृढ़ विश्वास फैल गया है कि इस न्यायाधिकारी को भी टोंगो देवी से सहायता प्राप्त हुई थी । इस कारण उसके जीवन-काल में ही अन्याय और अत्याचार काफी घट गये ।

उष्टा

जब सृष्टि का निर्माण हुआ, तब जल में से पृथ्वी ऊपर उठी । धीरे धीरे पृथ्वी पर समस्त प्राणियों का जन्म हुआ । लेकिन सूर्य के अभाव में सारे प्राणी अंधकार में ही रहने लगे ।

मानव खूँखार जानवरों के हमलों से परेशान रहने लगे । अंधेरे की वजह से वे अपने काम संपन्न नहीं कर पा रहे थे । वे केवल दो काम करते थे—खाना और सोना । काम न करने के कारण वे आलसी और मुक्त बन गये । उनका स्वास्थ्य भी बिगड़ने लगा ।

ऐसे कुछ समय बीता । मानवों में अधिक बुद्धिशाली बने एक व्यक्ति ने अन्य लोगों से कहा—

"ब्रह्मा ने सृष्टि के अन्यान्य प्राणी व उपकरणों के साथ सूर्य भगवान को भी निर्माण किया है । हम में से कोई व्यक्ति जाकर अगर सूर्य भगवान से प्रार्थना करे, तो वे हम पर कृपा कर अवश्य प्रकाश प्रदान करेंगे । तब हमें प्रकाश और उष्णता दोनों भी प्राप्त हो जाएँगे । जंगली जानवरों के अत्याचारों से भी हम मुक्त हो जाएँगे । हम स्वस्थ बन कर सुखपूर्वक अपने कार्य संपन्न कर सकेंगे । सूर्य भगवान के प्रसन्न होने पर हमें और कई तरह से लाभ होगा । प्रकाश में हम काम करेंगे तो आज हमारी जो दुरवस्था है, वह जाती रहेगी । काम करने से हमें स्वास्थ्य प्राप्त होगा । और स्वस्थ बनने पर हम दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति कर पाएँगे ।"

यह प्रस्ताव सब को पसंद आया । पर प्रश्न यह था कि सूर्य भगवान से निवेदन करने के लिए जाए कौन? कुछ समय तक सभी एक दूसरे का मुँह ताकते रहे । कोई सूर्य भगवान के पास जाने का साहस करने के लिए तैयार

२५ वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

नहीं हुआ ।

साठ वर्ष की अवस्थावाले एक वृद्ध ने आगे आकर कहा—"बेटों, मैं बूढ़ा हो गया हूँ । अब मेरा किसी तरह तुम लोगों के काम आना संभव नहीं है । फिर भी मेरे पैरों में चलने की ताक़त है । मैं सूर्य भगवान के पास जाकर प्रार्थना करूँगा, और अपना कार्य सफल कर लौटूँगा । अगर बीच यात्रा में मुझे कुछ हुआ तो चिंता मत करना । आखिर एक न एक दिन मरना तो है ही! आप लोगों के उपयोगार्थ कुछ काम करते करते मौत आ गई, तो मेरे लिए वह शानदार मौत होगी!"

इस पर एक नौजवान आगे आया, और उसने निवेदन किया—"दादाजी, यह काम बूढ़ों से संपन्न होनेवाला नहीं है । कोई यह नहीं बता सकता कि सूर्य भगवान तक पहुँचने में न मालूम कितना समय लगेगा । मैं अभी निकल पड़ता हूँ । रास्ते में कोई कठिनाइयाँ आएँगी तो मैं उनका सामना कर सकूँगा ।"

अब एक लड़का सामने आया । उसने कहा—"यह सफ़र बहुत लंबा है । इस यात्रा में अनेक वर्ष भी लग सकते हैं । मैं केवल दस साल की उम्रवाला बालक हूँ । अगर मुझे भेज दिया गया, तो मेरे वृद्ध होने से पहले मैं सूर्य भगवान तक ज़रूर पहुँच सकता हूँ । आप में से कोई भी इतनी दूर की यात्रा पूरी नहीं कर पाएँगे ।"

सब ने लड़के की बातें ध्यान से सुन लीं और महसूस किया कि वह ठीक ही कह रहा है ।

उसी समय भीड़ को चीरती हुई बीस साल की एक स्त्री ने आगे आकर कहा—"आप लोग मेरी बात सुन लीजिए । सही बात को

आप ठीक समझ नहीं रहे हैं । यह काम एक पीढ़ी में संपन्न होनेवाला नहीं है । आप लोग मुझे जाने दीजिए । मैं किसी भी हालत में सूर्य भगवान के पास नहीं पहुँच पाऊँगी । रास्ते में मेरे जो बच्चा पैदा होगा, उसे सूर्य भगवान तक पहुँचने का मौक़ा मिल सकता है ।"

उस युवती का नाम था उषा । उसकी बात को सब ने मान लिया । अपनी यात्रा पर निकलते हुए उसने कहा—"मैं जिस दिशा में जा रही हूँ उसी दिशा में आप लोग देखते रहिए । जब मेरा कार्य संपन्न होगा, तब मैं आग जलाऊँगी, या यह काम मेरा पुत्र करेगा । उस ज्वाला को देख कर आपको मालूम हो जाएगा कि सूर्य भगवान ने हम पर अनुग्रह किया है ।"

उषा के रवाना हुए सत्तर वर्ष बीत गये । वह अत्यन्त वृद्ध हो गई । एक दिन उसने अपने पुत्र से कहा—"बेटा, अब मैं आगे चल नहीं सकती । शेष यात्रा तुम्हीं पूर्ण करना । सूर्य भगवान का अनुग्रह होने पर ही तुम आग जलाओ । उसे देख हमारे लोग खुश हो जाएँगे ।"

उषा के कथन के अनुसार ज्वाला के दर्शन के लिए जनता पूरब दिशा में बरसों देखती रही । उसको निकले सौ वर्षों के बाद पूरब में एक लाल रोशनी दिखाई दी । जनता के आनंद का ठिकाना न रहा । वह चिल्ला उठी—"लो, देखो, यही हमारी उषा है । काम संपन्न हो गया है । अब हमारे लिए सूर्य भगवान का उदय होगा ।" कहते हुए सब ने उसी समय अपने अपने काम प्रारंभ किये ।

आज भी किसी कार्य को प्रारंभ करने से पहले लोग पूरब में उषा के दर्शन करना चाहते हैं । पूर्व दिशा में उषा की लाली देख कर लोग अपना काम शुरू करते हैं । सूर्य के उदय की प्रतीक्षा नहीं करते ।

इसके अलावा मानवों ने उषा से एक और बात भी समझ ली है । अगर मनुष्य को महान् कार्य संपन्न करना है, तो वह एक व्यक्ति द्वारा, एक पीढ़ी में संभव नहीं है । अनेक पीढ़ियों के लोगों को लगन व दृढता के साथ काम करने पर ही महान् कार्य को साधना संभव है ।

पेड़ पर चढ़नेवाले केकड़े

रॉबर क्रॉब (बर्गस लाटो) नाम के केकड़े नारियल खाने के लिए पेड़ों पर चढ़ जाते हैं।

बहुत तेज दौड़नेवाले पक्षी

सारे पक्षियों में काँटेदार पूँछवाला पपीहा अत्यंत तेज दौड़ता है। प्रति घंटे १०६.७५ मील की गति से वह उड़ सकता है।

बर्फ से बचानेवाले फूल

ऊँचे पहाड़ों पर क्रोफूट (रानस्वुलस ग्लासियालिस) नाम के सुन्दर फूल खिलते हैं। इन पुष्पों का मकरंद ही हिम के प्रतिकार का काम करके इनकी रक्षा करता है।

पर्यटन विभाग भारत सरकार

अरे! यह क्या हो रहा है।
पार्टी हो रही है! हा! हा! तुम भी आ जाओ!
और ज़रा गंदगी का ढेर देखो!
तुम्हें, या किसी को, क्या लेना-देना है इससे?
क्या मतलब?
आप से भी जनाब! आप अपनी विरासत और इतिहास की ऐसी तौहीन कैसे कर सकते हैं?
इन पूजा करने वालों का ही कुछ ख्याल कीजिए!
हाँ, इन बहादुर बच्चों की बात बिल्कुल ठीक है।
यह हुड़दंग बंद कीजिए वरना हम सब आपको यहाँ से भगा देंगे!
चलो, तुम लोग मेरे साथ औरंगाबाद चलो। तुम्हारा नाम काफ़ी सुना था। अब तुम्हारा काम भी देखा। बहुत खूब! शाबाश!
शुक्रिया, सर!
अपना भारत सुन्दर
तुम्हें भी अपने पर्यावरण को नासमझ लोगों के हाथों बरबाद होने से बचाना चाहिए, हम मिल-जुल कर काम करेंगे तो भारत की सुंदरता को हमेशा के लिए बनाए रखेंगे।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अप्रैल १९९० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

S. B. Prasad

A. L. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ फरवरी १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

दिसम्बर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : रोज नहाओ, बनोगे स्वस्थ !

द्वितीय फोटो : मुझको देखो कितना मस्त !!

प्रेषक : कु. श्रुति, एसी १-१५९ डी. शालीमार बाग, दिल्ली - ११० ०५२

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीज, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिए :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास -६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

देखें आप कितने होशियार हैं...

एक हास्य अभिनेता अपने चेहरे पर मज़ाकिया मुस्कान सजाए नौकरी की तलाश में होटल पहुंचा.

होटल मैनेजर शायद गूंगा था. और उसे हास्य कलाकार पसंद नहीं आते थे.

टेबल पर 'HOTEL' शब्द १५ कॅम्लिन पेंसिलों के साथ लिखा गया था.

जब हास्य अभिनेता ने नौकरी के बारे में पूछा तो मैनेजर ने उन पेंसिलों में से ३ पेंसिलें उठाकर अलग ढंग से रख दिया. बस, यही उसका जवाब था.

हास्य अभिनेता को कारण पूछने की भी ज़रूरत नहीं पड़ी. उसने अपनी मज़ाकिया मुस्कान वहीं उतार फेंकी और मुंह लटकाकर चला गया.

क्या आप बता सकते हैं कि मैनेजर का जवाब क्या था?

(यदि आपके पास इस वक्त १५ कॅम्लिन पेंसिलें नहीं हैं तो उसके बदले माचिस की तीलियाँ इस्तेमाल कीजिए.)

कॅम्लिन फ्लोरा पेंसिल

समझदार बच्चों के लिए.

रसदार आमों से बने
फ्रूट बार
पैक यूं
ताज़गी रहे
ज्यूं की त्यूं
nutrine
Naturo
MANGO FRUIT BAR
nutrine
Naturo
MANGO FRUIT BAR
अब बारहों महीने
आम का सीज़न!
सुविधापूर्ण... स्वादपूर्ण!
Visesh/NC/8830/Hin